[2019] 15 एस. सी. आर 936

विनुभाई हरिभाई मालवीय और ओआरएस।

वी.

गुजरात राज्य और ए. एन. आर.

(2017 की आपराधिक अपील Nos.478-479)

16 अक्टूबर, 2019

[आर. एफ. नरीमन, सूर्या कान्ट और

वी. रामसुब्रमण्यन, जे. जे.]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973-एसएस। 156 (1) (3) और 173 (8)

- उच्च न्यायालय ने कहा कि मजिस्ट्रेट के पास कोई अधिकार नहीं है

आरोप-पत्र दाखिल किए जाने और संज्ञान लिए जाने के बाद आगे की जांच का आदेश देने की शक्तिः उचित नहीं है।

द.

मजिस्ट्रेट की शक्ति यू/एस। 156 (3) CrP.C का बहुत व्यापक है, क्योंकि यह न्यायिक प्राधिकरण है जिसे संतुष्ट किया जाना चाहिए कि एक उचित

पुलिस द्वारा जाँच की जाती है-यह सुनिश्चित करने के लिए कि एक "उचित जाँच" निष्पक्ष और न्यायपूर्ण अर्थ में हो।

पुलिस द्वारा जाँच जो ऐसे मजिस्ट्रेट को संविधान के Art.21 की निगरानी करनी है, यह अनिवार्य करता है कि सभी शक्तियाँ आवश्यक हैं, जो आनुषंगिक या निहित भी हो सकते हैं, जो मजिस्ट्रेट के लिए एक उचित जांच सुनिश्चित करने के लिए उपलब्ध हैं, जिसमें बिना किसी संदेह के, एक रिपोर्ट के बाद आगे की जांच का आदेश शामिल होगा।

उसके द्वारा प्राप्त यू / s.173 (2); और मुकदमा शुरू होने तक आपराधिक कार्यवाही के सभी चरणों में ऐसे मजिस्ट्रेट में कौन सी शक्ति सुनिश्चित करना जारी रखेगी-इसके अलावा, "जांच" का उल्लेख किया गया है।

एस में। 156 (1) सी. आर. पी. सी. की "जाँच" की परिभाषा के अनुसार यू / धारा 2 (ज), के संग्रह के लिए सभी कार्यवाहियों को शामिल करता है

एक पुलिस अधिकारी द्वारा किए गए साक्ष्य; जिसमें निस्संदेह आगे की जांच के माध्यम से कार्यवाही शामिल होगी Cr.P.C का s.173 (8)-भारत का संविधान-अनुच्छेद। 21 .

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973-एसएस। 156 (1) (3) , 173 (8) –

दंड संहिता, 1860-एस. एस. 420 , 465 , 467 , 468 , 471 , 384 & 571 - पुलिस रिपोर्ट के बाद-मजिस्ट्रेट की आगे की जांच करने की शक्ति-ए

'आर' और 'एस' के एक पावर-ऑफ-अटॉर्नी धारक द्वारा प्राथमिकी दर्ज की गई थी जो कथित रूप से 'यूके या यूएसए' में रह रहे थे-प्राथमिकी में बताया गया है कि 'आर'

और 'एस' एक कृषि भूमि के स्वतंत्र मालिक थे-यह आरोप लगाया गया था कि एक 'बी' के उत्तराधिकारियों, जिनसे 'आर' और 'एस' ने उक्त कृषि भूमि प्राप्त की थी, ने 'वी' के साथ साजिश रची थी

और 'आर' और 'एस' के पावर-ऑफ-अटॉर्नी धारक से धन उगाही करने का प्रयास कर रहे थे और उक्त भूमि को हड़पने का प्रयास किया था।

जाँच की गई और आरोप पत्र दायर किया गया मजिस्ट्रेट ने संज्ञान लिया और अपराधों के संबंध में अभियुक्तों को समन जारी किया। 420 , 465 , 467 , 468 , 471 , 384 & 571 आई. पी. सी.-अभियुक्त व्यक्तियों ने आगे की जाँच के लिए आवेदन दायर किए

यू / Cr.P.C का s.173 (8) और आरोपमुक्त-मजिस्ट्रेट ने आवेदनों को खारिज कर दिया-अभियुक्त द्वारा प्राथमिकी दर्ज करने के लिए या मजिस्ट्रेट द्वारा यू/एस जांच का आदेश देने के लिए आवेदन। 156 (3) मजिस्ट्रेट द्वारा आगे की जांच को खारिज करने के लिए अलग आपराधिक संशोधन भी खारिज कर दिए गए और प्राथमिकी को खारिज करने का आदेश दायर किया गया-दूसरा

अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश ने आवेदन का अध्ययन किया s.173 (8) और अभिनिर्धारित किया कि आगे की जाँच के लिए एक मामला बनाया गया था-उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि मजिस्ट्रेट के पास आरोप पत्र दायर करने और संज्ञान लेने के बाद आगे की जाँच का आदेश देने की कोई शक्ति नहीं है-अपील पर अभिनिर्धारित किया गयाः मजिस्ट्रेट की शक्तियों के बारे में इस तरह के संकीर्ण और प्रतिबंधात्मक दृष्टिकोण के लिए कोई वारंट नहीं है, विशेष रूप से जब ऐसी शक्तियों का पता लगाया जा सकता है। 156 (3) आर/डब्ल्यू। s.156 (1), एस. 2 (एच) और एस. 173 (8) Cr.P.C और मुकदमे से पहले आपराधिक मामलों की प्रगति के सभी चरणों में उपलब्ध होगा।

वास्तव में शुरू होता है-आगे की जाँच का आदेश दिया जाना चाहिए या नहीं, यह मजिस्ट्रेट के विवेकाधिकार के भीतर है जो प्रत्येक मामले के तथ्यों पर और मामले में इस तरह के विवेकाधिकार का प्रयोग करेगा। कानून के अनुसार-तत्काल मामले में, तथ्यों में आरोप लगाया गया

आगे की जांच के लिए आवेदन ऐसे तथ्य थे जो 'आर' और 'एस' के पक्ष में की गई राजस्व प्रविष्टियों से संबंधित थे और उनका दावा कैसे गलत और फर्जी था।

आगे की जाँच के लिए आवेदन प्रकृति में थे

क्रॉस-एफ़. आई. आर. जो दर्ज नहीं की गई थी-इसके अलावा, राजस्व आयुक्त ने राजस्व प्राधिकरण द्वारा पारित आदेश पर संदेह व्यक्त किया और यह भी कहा कि एक आवेदन 2000 में 'बी' की विधवा द्वारा दायर किया गया था, जिसका वर्ष 1999 में निधन हो गया था, जिससे पता चलता है कि उसके हस्ताक्षर प्रथम दृष्टया जाली थे-इसलिए, एफ़. आई. आर. में कथित तथ्यों की आगे की जाँच की आवश्यकता नहीं है।

पहले ही दायर किया जा चुका है-हालांकि, आयुक्त के पत्र और अन्य तथ्यों पर विचार करते हुए, पुलिस ने तथ्यों के आधार पर एक प्राथमिकी दर्ज करने का निर्देश दिया-इस प्रकार, उच्च न्यायालय के फैसले में कहा गया है कि

संज्ञान के बाद मजिस्ट्रेट को आगे की जांच का आदेश देने की शक्ति से वंचित कर दिया जाता है।

9] 15 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973-भारत का संविधान

-

कला. 21 – निष्पक्ष सुनवाई और निष्पक्ष जांच-आयोजितः एक निष्पक्ष सुनवाई तभी शुरू होनी चाहिए जब एक जांच अपने आप में निष्पक्ष और न्यायपूर्ण हो-सभी जांच और जांच का अंतिम उद्देश्य, चाहे वह पुलिस द्वारा हो या मजिस्ट्रेट द्वारा, यह सुनिश्चित करना है कि जिन लोगों पर मुकदमा नहीं चलाया गया है, उन पर मुकदमा न चलाया जाए-कि यह न्यूनतम प्रक्रिया है।

आवश्यकता जो कला की मौलिक आवश्यकता है। 21 संविधान पर संदेह नहीं किया जा सकता-यह सर्वव्यापी है

कला की। 21 Cr.P.C पर जिसे Cr.P.C के सभी प्रावधानों की व्याख्या को सूचित करने की आवश्यकता है, ताकि उस कला को सुनिश्चित किया जा सके। 21 अक्षर और आत्मा दोनों में पालन किया जाता है।

अपीलों का निपटारा करते हुए, न्यायालय ने पकड़नाः 1. में धारा 173 (8) की शुरूआत के साथ

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 पुलिस विभाग को मजिस्ट्रेट को पुलिस रिपोर्ट भेजे जाने के बाद भी अपराध की आगे की जांच करने की शक्ति से लैस किया गया है। काफी हद तक

जाहिर है, यह शक्ति तब तक जारी रहती है जब तक कि परीक्षण को कहा जा सकता है

एक आपराधिक मामले में शुरू करें। परेशान करने वाला सवाल यह था कि क्या मजिस्ट्रेट धारा 173 के तहत पुलिस रिपोर्ट भेजे जाने के बाद आगे की जांच का आदेश दे सकते हैं।

[पैरा 19] [956-ई]

2. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156 (3) के तहत मजिस्ट्रेट की शक्ति

उचित जाँच सुनिश्चित करने के लिए मजिस्ट्रेट के पास सभी आवश्यक शक्तियाँ, जो आकस्मिक या निहित भी हो सकती हैं, उपलब्ध हैं। जिसमें, निस्संदेह, धारा के तहत उसके द्वारा एक रिपोर्ट प्राप्त होने के बाद आगे की जांच का आदेश शामिल होगा।

173 (2) ; और ऐसी कौन सी शक्ति बनी रहेगी

जब तक मुकदमा शुरू नहीं हो जाता, तब तक आपराधिक कार्यवाही के सभी चरणों में मजिस्ट्रेट। वास्तव में, लिखित रूप में भी, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156 (1) में निर्दिष्ट "जांच", के अनुसार होगी

धारा 2 (एच) के तहत "जांच" की परिभाषा में सभी शामिल हैं

पुलिस विनुभाई हरिभाई मालवीय और ओ. आर. एस. द्वारा साक्ष्य एकत्र करने के लिए कार्यवाही।

वी. गुजरात राज्य और ए. एन. आर.

अधिकारी; जिसमें निस्संदेह कार्यवाही शामिल होगी सीआरपीसी की धारा 173 (8) के तहत आगे की जांच। [पैरा 23] [960-डी-एफ]

3. संघ लोक सेवा आयोग बनाम। एस. पापैया यह

4. अमृतभाई शंभूभाई पटेल बनाम के निर्णयों में न्यायालय द्वारा कोई उचित कारण नहीं दिया गया है। सुमनभाई कांतिबाई पटेल, अतुल राव बनाम। कर्नाटक राज्य और अन्न। और विकास रंजन रूट बनाम। सचिव (गृह), राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली सरकार के माध्यम से बताएँ कि मजिस्ट्रेट की आगे का आदेश देने की शक्तियाँ क्यों हैं। प्रक्रिया जारी होने पर जाँच अचानक बंद हो जाएगी, और एक अभियुक्त मजिस्ट्रेट के सामने पेश होगा, जबकि

साथ ही, अपराध की आगे की जांच करने की पुलिस की शक्ति मुकदमा शुरू होने तक जारी रहती है। इस तरह का दृष्टिकोण इस न्यायालय के पहले के फैसलों के अनुरूप नहीं होगा, विशेष रूप से, सकिरी, समाज परिवर्तन समुद्र, विनय त्यागी और हार्डीप सिंह ने स्पष्ट रूप से कहा था कि एक अपराधी

मुकदमा संज्ञान लेने के बाद शुरू नहीं होता है, बल्कि आरोप तय होने के बाद ही शुरू होता है। इस न्यायालय के हाल के फैसलों में जिस बात को बिल्कुल भी महत्व नहीं दिया गया है, वह है संविधान का अनुच्छेद 21 और यह तथ्य कि अनुच्छेद एक निष्पक्ष और न्यायपूर्ण जांच से कम की मांग नहीं करता है। यह कहना कि एक निष्पक्ष और न्यायपूर्ण जांच [2019] 15 एस. सी. आर. का नेतृत्व करेगी।

इस निष्कर्ष तक कि पुलिस, निश्चित रूप से, धारा 173 (8) के तहत मजिस्ट्रेट की मंजूरी के अधीन, आरोप तय होने तक किसी अपराध की आगे की जांच करने की शक्ति रखती है, लेकिन यह कि

मुकदमे से पहले की कार्यवाही के बीच में, न्याय का उपहास होगा, क्योंकि कुछ मामलों में आगे की मांग की जा सकती है जाँच ताकि एक निर्दोष व्यक्ति को गलत तरीके से आरोपित न किया जाए

अभियुक्त के रूप में या कि प्रथम दृष्टया दोषी व्यक्ति को छूट नहीं दी गई है। मजिस्ट्रेट की शक्तियों के बारे में इस तरह के संकीर्ण और प्रतिबंधात्मक दृष्टिकोण के लिए कोई वारंट नहीं है, विशेष रूप से जब ऐसी शक्तियां दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156 (1), धारा 2 (एच) और धारा 173 (8) के साथ पठित धारा 156 (3) के लिए पता लगाने योग्य हैं, जैसा कि ऊपर देखा गया है, और मुकदमा वास्तव में शुरू होने से पहले एक आपराधिक मामले की प्रगति के सभी चरणों में उपलब्ध होगा। यह न्याय के हित में भी होगा कि प्रत्येक मामले के तथ्यों के आधार पर स्वयं मजिस्ट्रेट द्वारा इस शक्ति का प्रयोग किया जाए। आगे की जाँच का आदेश दिया जाना चाहिए या नहीं, यह विद्वान मजिस्ट्रेट के विवेक के भीतर है जो प्रत्येक मामले के तथ्यों पर और कानून के अनुसार इस तरह के विवेक का प्रयोग करेगा। उदाहरण के लिए, यदि नए तथ्य सामने आते हैं जो

जैसा कि हसनभाई वलीभाई कुरैशी में कहा गया था, आपराधिक कार्यवाही को समाप्त करने में और देरी से बचने की तुलना में कुछ व्यक्तियों को दोषी ठहराना या दोषमुक्त करना, सच्चाई पर पहुंचना और आपराधिक मामले में पर्याप्त न्याय करना अधिक महत्वपूर्ण है। इसलिए, इस हद तक कि अमृतभाई शंभूभाई पटेल, अतुल राव और बिकाश रंजन राउत के फैसलों ने इसके विपरीत माना है, वे अस्वीकृत हो जाते हैं। रणधीर सिंह राणा बनाम को जोड़ने की आवश्यकता नहीं है। राज्य (दिल्ली प्रशासन) और रीता नाग बनाम। पश्चिमी राज्य

बंगाल और ओआरएस। भी खारिज कर दिया जाता है। [पैरा 38] [985-जी-एच; 986 ए-जी]

5. जब यह न्यायालय इस मामले के तथ्यों पर आता है, तो यह स्पष्ट है कि 22.12.2009 दिनांकित प्राथमिकी दो आपराधिक कृत्यों से संबंधित है, अर्थात्, नकली और फर्जी 'सतखत' की तैयारी और विचाराधीन कृषि भूमि के संबंध में पावर-ऑफ-अटॉर्नी, और रुपये की राशि की मांग। 2.5 अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा धन उगाही के प्रयास के रूप में करोड़। आगे की जांच के लिए आवेदन में जिन तथ्यों का आरोप लगाया गया है, वे ऐसे तथ्य हैं जो 'आर' और 'एस' के पक्ष में की गई राजस्व प्रविष्टियों से संबंधित हैं और कैसे एक ही भूमि पर उनका दावा गलत और फर्जी है।

विनुभाई हरिभाई मालवीय और ओआरएस। वी. गुजरात राज्य और ए. एन. आर.

इसलिए उत्तरदाताओं का यह कहना सही है कि तथ्य

आगे की जाँच के लिए आवेदनों में आरोप वास्तव में एक क्रॉस-एफ़. आई. आर. की प्रकृति में हैं जो कभी दर्ज नहीं की गई है। वास्तव में, राजस्व आयुक्त का कलेक्टर को दिनांक 15.03.2011 का संचार, जिस पर अपीलकर्ताओं द्वारा इतनी दृढ़ता से भरोसा किया गया था, इस बात को दर्शाता है। इस संचार में, आयुक्त को संदेह है कि एक राजस्व प्राधिकरण द्वारा पारित एक विशेष आदेश कभी भी अस्तित्व में था, और यह कि 2010 में लंबे समय से मृतक 'बी' के नाम पर आवेदन करके, फॉर्म संख्या 3 की एक प्रति प्राप्त करने के लिए, प्रथम दृष्टया, एक आपराधिक अपराध के बराबर होगा।

इसके अलावा, आयुक्त ने आगे कहा कि बी की विधवा, जिसका दिसंबर 1999 में निधन हो गया था, संभवतः वर्ष 2000 में आवेदन नहीं कर सकती थी; जो दर्शाता है कि उसके हस्ताक्षर भी प्रथम दृष्टया जाली हैं। इसके अलावा, उक्त 'आर' और 'एस' पटेल वर्तमान में 48 और 53 वर्ष के हैं, और यदि उन्हें कहा जा सकता है 1934 से उक्त कृषि भूमि के कब्जे के बारे में कहा जा सकता है कि वे उस समय कब्जे में थे जब उनका जन्म नहीं हुआ था। इसके अलावा, चूंकि ये दोनों सज्जन शुरू से ही विदेश में थे, इसलिए कहा जाता है कि वे संभवतः किसान नहीं हो सकते थे

कृषि भूमि पर खेती करना। [पैरा 41] [987-एफ-एच; 988-ए-डी]

6. 15.03.2011 के संचार में आरोपों को देखते हुए, इस न्यायालय का विचार है कि यह ऐसा मामला नहीं है जिसमें किसी भी तरह की मांग की जाए। 22.12.2009 पर दर्ज की गई एफ़. आई. आर. में कथित तथ्यों की आगे की जाँच। फिर भी, उक्त पत्र में आयुक्त द्वारा जो कहा गया है, उसे ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय का विचार है कि पुलिस को इन तथ्यों के आधार पर एक प्राथमिकी दर्ज करने का निर्देश दिया जाए, जिसकी जांच आयोग द्वारा नामित एक वरिष्ठ पुलिस अधिकारी द्वारा की जानी चाहिए।

संबंधित पुलिस आयुक्त। [पैरा 42] [988-जी-एच; 989-ए]

पूजा पाल बनाम। यूओआई (2016) 3 एससीसी 135: [2016] 11 एस. सी. आर. 560; बिहार राज्य बनाम। जे. ए. सी. सल्धाना और अन्य। (1980) 1 एससीसी 554: [1980] 2 एस. सी. आर. 16; सकिरी वासु बनाम। यू. पी. और अन्य राज्य। (2008) 2 एससीसी 409 [2007] 12 एससीआर 1100 ; राम लाल नारंग बनाम। राज्य (दिल्ली प्रशासन) (1979) 2 एससीसी 322; एच. एन. रिशबुद बनाम दिल्ली राज्य ए. आई. आर 1955 एस. सी. 196: [1955] एससीआर 1150; संघ लोक सेवा आयोग बनाम। एस. पापैया (1997) 7 एस. सी. सी. 614:

[1997] 4 पूरक। एस. सी. आर. 56; भगवंत सिंह बनाम

पुलिस आयुक्त और एन. आर. (1985) 2 एससीसी 357:

एस.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

[1985] 3 एससीआर 942; हसनभाई वलीभाई कुरैशी बनाम। गुजरात राज्य और अन्य। (2004) 5 एससीसी 347: [2004] 3 एससीआर 762; हेमंत धस्माना बनाम। सी. बी. आई और ए. एन. आर. (2007) 1 एससीसी 536: [2001] 1 पूरक। एससीआर 646; गुलजार अहमद आज़मी बनाम। भारत संघ और ओआरएस। (2012) 10 एससीसी 731: [2012] 9 एस. सी. आर. 287; विनय त्यागी बनाम। इरशाद अली और ओआरएस। (2013) 5 एस. सी. सी. 762 [2012] 13 एस. सी. आर. 1005-पर निर्भर था।

अमृतभाई शंभूभाई पटेल बनाम। सुमनभाई कांतिबाई पटेल (2017) 4 एससीसी 177: [2017] 4 एससीआर 105; अतुल राव बनाम। कर्नाटक राज्य और अन्र। (2018) 14 एस. सी. सी. 298; बिकाश रंजन रूट बनाम। सचिव (गृह) के माध्यम से राज्य, राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली सरकार (2019) 5 एस. सी. सी. 542; रणधीर सिंह राणा बनाम। राज्य (दिल्ली प्रशासन) (1997) 1 एससीसी 361: [1996] 10 पूरक। एससीआर 880;

रीता नाग बनाम। पश्चिम बंगाल राज्य और अन्य। (2009) 9 एस. सी. सी. 129 [2009] 13 एस. सी. आर. 276-खारिज।

देवरपल्ली लक्ष्मीनारायण रेड्डी और अन्य। वी. वी. नारायण रेड्डी और अन्य। (1976) 3 एससीसी 252:

[1976] पूरक। एस. सी. आर. 524-सही कानून नहीं माना गया।

भारत संघ और एएनआर। वी. डब्ल्यू. एन. चड्ढा (1993) पूरक।

4 एससीसी 260: [1992] 3 पूरक। एस. सी. आर. 594; श्रीमती नागावा बनाम। वीरन्ना शिवालोंगप्पा कोंजलगी और अन्य। (1976) 3 एससीसी 736: [1976] पूरक। एस. सी. आर. 123; प्रभा माथुर और अन्र। वी. प्रमोद अग्रवाल और अन्य। , (2008) 9 एससीसी 469 [2008] 13 एससीआर 1086; नरेंद्र जी. गोयल बनाम। महाराष्ट्र राज्य (2009) 6 एससीसी 65: [2009] 8 एस. सी. आर. 1004; दीनूभाई भोगभाई सोलंकी बनाम। गुजरात राज्य और अन्य। (2014) 4 एससीसी 626: [2014] 3 एससीआर 932

प्रतिष्ठित।

बाबूभाई वी. गुजरात राज्य और अन्य। (2010) 12 एस. सी. सी. 254 [2010] 10 एस. सी. आर. 651; रोमिला थापर बनाम। भारत संघ, (2018) 10 एस. सी. सी. 753: [2018] 11 एस. सी. आर. 951 को लागू नहीं किया गया। श्रीमती मेनका गांधी बनाम भारत संघ और ए. एन. आर. (1978) 1 एससीसी 248: [1978] 2 एस. सी. आर. 621; पुलिस आयुक्त, दिल्ली बनाम पंजीयक, दिल्ली उच्च न्यायालय, नई दिल्ली विनुभाई हरिभाई मालवीय और ओ. आर. एस.

वी. गुजरात राज्य और ए. एन. आर.

सिंह (1977) 4 एससीसी 459: [1978] 1 एस. सी. आर. 615; मनदीप सिंह बनाम। पंजाब राज्य और अन्य। (2014) 3 एससीसी 92:

[2014] 2 एस. सी. आर. 1; सामान्य कारण v. भारत संघ

(1996) 6 एस. सी. सी. 775 [1996] 9 पूरक। एससीआर 296; राजा सम्राट वी। ख्वाजा नजीर अहमद एयर 1945 पीसी 18

संदर्भित किया गया।

मामला कानून संदर्भ

[1978] 2 एससीआर 621

पैरा

16

संदर्भित किया गया है

[1996] 7 पूरक। एससीआर 432

पैरा

16

संदर्भित किया गया है

[2016] 11 एससीआर 560

उस पर भरोसा करें

पैरा

18

[1979] 2 एससीआर 717

संदर्भित किया गया है

पैरा

20

[1980] 2 एससीआर 16

उस पर भरोसा करें

पैरा

22

[2007] 12 एससीआर 1100

उस पर भरोसा करें

पैरा

22

[1976] पूरक। एससीआर 524

सही कानून नहीं माना गया पैरा 24

[1978] 1 एससीआर 615

पैरा

24

संदर्भित किया गया है

(1979) 2 एस. सी. सी. 322

उस पर भरोसा करें

पैरा

27

[1955] एससीआर 1150

उस पर भरोसा करें

पैरा

27

[1997] 4 पूरक। एससीआर 56

उस पर भरोसा करें

पैरा

28

[1985] 3 एससीआर 942

उस पर भरोसा करें

पैरा

28

[2004] 3 एससीआर 762

उस पर भरोसा करें

पैरा

29

[2001] 1 पूरक। एससीआर 646

उस पर भरोसा करें

पैरा

30

[2012] 9 एससीआर 287

उस पर भरोसा करें

पैरा

32

[2012] 13 एससीआर 1005

उस पर भरोसा करें

पैरा

33

[2014] 2 एससीआर 1

संदर्भित किया गया है

पैरा

34

[1996] 9 पूरक। एससीआर 296

संदर्भित किया गया है

पैरा

34

[2017] 4 एससीआर 105

खारिज कर दिया गया

पैरा 38

[2019] 15 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

(2018) 14 एससीसी 298

खारिज कर दिया गया

पै

रा 38

(2019) 5 एस. सी. सी. 542

पै

रा 38

खारिज कर दिया गया

[1996] 10 पूरक। एससीआर 880

खारिज कर दिया गया

पै

रा 38

[2009] 13 एससीआर 276

खारिज कर दिया गया

पै

रा 38

पैरा 39

संदर्भित किया गया है

एयर 1945 पी. सी. 18

[1992] 3 पूरक। एससीआर 594

प्रतिष्ठित

पै

रा 40

[1976] पूरक। एससीआर 123

प्रतिष्ठित

पै

रा 40

[2008] 13 एससीआर 1086

प्रतिष्ठित

पै

रा 40

[2009] 8 एससीआर 1004

प्रतिष्ठित

पै

रा 40

[2014] 3 एससीआर 932

प्रतिष्ठित

पै

रा 40

[2010] 10 एससीआर 651

अप्रयोज्य रखा गया

पै

रा 40

[2018] 11 एससीआर 951

अप्रयोज्य रखा गया

पै

रा 40

आपराधिक अपील न्यायनिर्णयः आपराधिक अपील

नं. 478-479 2017 का

उच्च न्यायालय के 05.08.2013 दिनांकित निर्णय और आदेश से

2012 के आपराधिक संशोधन आवेदन संख्या 44 में अहमदाबाद में आपराधिक विविधता के साथ। 2012 का आवेदन संख्या 1746

दुष्यंत दवे, वरिष्ठ अधिवक्ता। , नचिकेता जोशी, अनिकेत सेठ, नीरज

मालवीय, मोहम्मद। असद खान, सुश्री सुचेता जोशी, सुश्री हिमाद्री मकसर, अधिवक्ता। अपीलार्थियों के लिए।

बसंत आर., विनय नवारे, वरिष्ठ अधिवक्ता। , सुश्री हेमंतिका वाही,

अनिरुद्ध पी. मयी, सुनील कुमार वर्मा, मनु कृष्णन जी., शारिक अहमद, सुश्री ग्वेन कार्तिका, अधिवक्ता। उत्तरदाताओं के लिए।

न्यायालय का निर्णय इसके द्वारा दिया गया था

आर. एफ. नरीमन, जे.

1. यह मामला एक प्रथम सूचना रिपोर्ट (इसके बाद) से उत्पन्न होता है।

जिसे "एफ़. आई. आर". के रूप में संदर्भित किया जाता है) जो 22.12.2009 पर दर्ज किया गया था। एफ. आई. आर. रमनभाई भागूभाई पटेल और शंकरभाई भागूभाई पटेल के पावर-ऑफ-अटॉर्नी नितिनभाई मंगूभाई पटेल द्वारा दर्ज की गई है, जो कथित रूप से "यू. के. या यू. एस. ए". में रह रहे हैं। एफ. आई. आर. में की गई शिकायत की गंभीरता यह है कि विनुभाई हरिभाई मालवीय इन दोनों विनुभाई हरिभाई मालवीय और ओ. आर. एस. को ब्लैकमेल कर रहे हैं।

वी.

गुजरात राज्य और ए. एन. आर. [आर. एफ. नरीमन, जे.]

कृषि भूमि के संबंध में सज्जनों जो शहर के ठीक बाहर है

सूरत, गुजरात और जो लगभग 8296 वर्ग मीटर में फैला हुआ है। एफ. आई. आर. में आरोप लगाया गया है कि रमनभाई पटेल और शंकरभाई पटेल इस भूमि के पूर्ण और स्वतंत्र मालिक हैं, जिन्होंने इसे वर्ष 1975 में भीखाभाई खुशालभाई और उनकी पत्नी भीकीबेन भीखाभाई से प्राप्त किया था। एफ. आई. आर. में तब बताया गया है कि सूरत शहर में हाल ही में भूमि की कीमतों में वृद्धि के कारण, भीखाभाई और भिकीबेन के उत्तराधिकारियों ने विनूभाई हरिभाई मालवीय और मनुभाई कुर्ज़ीभाई मालवीय के साथ मिलकर एक-दूसरे के साथ मिलकर साजिश रची है, और एक स्थानीय समाचार पत्र में "भूमि हड़पने वालों से सावधान रहें" शीर्षक के तहत एक सार्वजनिक नोटिस प्रकाशित किया है।

07.06.2008 पर। इसके कुछ समय बाद, विनूभाई हरिभाई मालवीय ने एक मध्यस्थ से संपर्क किया, जिसने बदले में नितिनभाई पटेल (जिन्होंने प्राथमिकी दर्ज की) से संपर्क किया, जिसके तहत, नितिनभाई पटेल के अनुसार, विनूभाई मालवीय ने रुपये की राशि की मांग की। 2.5 इस भूमि के संबंध में विवादों को "निपटाने" के लिए करोड़। उक्त एफ़. आई. आर. में आरोप लगाया गया है कि भीखाभाई के वारिसों, उक्त नितिनभाई पटेल से पैसे ऐंठने के प्रयास के अलावा

2. एफ. आई. आर. की पृष्ठभूमि यह तथ्य है कि एक खुशालभाई कृषि भूमि का मूल किरायेदार था, जिसका राजस्व सर्वेक्षण था। No.342, पूना (मौजे), चोरियासी (ताल), जिला सूरत में स्थित 2 एकड़, 2 गुंथाओं में फैला हुआ है। खुशालभाई की मृत्यु हो गई, जिसके बाद उनके बेटे भीखाभाई उनके स्थान पर किरायेदार बन गए। भीखाभाई की मृत्यु 23.12.1984 पर हुई और उनकी पत्नी भीकीबेन की मृत्यु 18.12.1999 पर हुई। भीखाभाई के उत्तराधिकारियों द्वारा गुजरात मित्र और गुजरात दर्पण दैनिक में दिनांकित एक सार्वजनिक नोटिस जारी किया गया था, जिसमें कहा गया था कि रमनभाई और शंकरभाई पटेल भूमि हड़पने वाले हैं, और उक्त संपत्ति में तीसरे पक्ष के अधिकार बनाने का प्रयास कर रहे हैं। इससे भीखाभाई के कानूनी उत्तराधिकारी बने।

अपने पावर-ऑफ-अटॉर्नी धारक के माध्यम से, कलेक्टर, नानपुरा (सूरत) को 1976 में की गई राजस्व प्रविष्टियों को रद्द करने के लिए 12.06.2008 पर आवेदन करते हुए।

3. एफ. आई. आर. दर्ज करने के बाद, पुलिस द्वारा जाँच की गई, जिसके परिणामस्वरूप न्यायिक मजिस्ट्रेट (प्रथम श्रेणी), सूरत को एक आई. डी. 1 दिनांकित आरोप पत्र प्रस्तुत किया गया। आई. डी. 1 पर, उक्त मजिस्ट्रेट ने संज्ञान लिया और धारा 420,465,467,468,471,384 और 511 [2019] 15 एस. सी. आर. के तहत अपराधों के संबंध में अभियुक्तों को समन जारी किया।

भारतीय दंड संहिता, 1860 (इसके बाद आई. पी. सी. के रूप में संदर्भित)। समन के अनुसार, आरोपी उक्त मजिस्ट्रेट के सामने पेश हुआ। आई. डी. 1 पर अभियुक्त नं. 1 विनूभाई हरिभाई मालवीय द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (इसके बाद) की धारा 173 (8) के तहत आगे की जांच के लिए एक आवेदन (प्रदर्शनी 28) दायर किया गया था।

"सीआरपीसी" के रूप में संदर्भित) और निर्वहन के लिए एक अन्य आवेदन (29 प्रदर्शित करें)। इसी तरह, 14.06.2011 पर, आरोपी 2 से 6 द्वारा आगे की जांच (प्रदर्शन 31) और आरोपमुक्त करने (प्रदर्शन 32) के लिए आवेदन दायर किए गए थे। दिनांक 1 के एक आदेश द्वारा, मजिस्ट्रेट ने आगे की जांच के लिए दायर किए गए आवेदनों को खारिज कर दिया (यानी 28 और 31 को प्रदर्शित करता है), यह कहते हुए कि आवेदकों द्वारा रखे जाने वाले तथ्य बचाव पक्ष के साक्ष्य के रूप में थे जो मुकदमे में लिए जाएंगे। इसी तरह, 21.10.2011 पर विद्वान मजिस्ट्रेट ने भी आरोपमुक्त करने के लिए किए गए आवेदनों को खारिज कर दिया (यानी 29 और 32 को प्रदर्शित करता है)। 4. इस बीच, विनूभाई हरिभाई मालवीय ने 2011 के आपराधिक विविध आवेदन 26.07.2011 को पेश किया और

अन्य अभियुक्त प्राथमिकी दर्ज करने के लिए, या मजिस्ट्रेट को आदेश देने के लिए

5. सत्र न्यायालय, सूरत के समक्ष अलग-अलग आपराधिक पुनरीक्षण आवेदन दायर किए गए थे, जो पुनरीक्षण आवेदन संख्या थी। 376 और 2011 का 346, जहाँ तक आगे की जाँच के लिए विद्वान मजिस्ट्रेट द्वारा बर्खास्तगी और एफ. आई. आर. के पंजीकरण को अस्वीकार करने का आदेश था चिंतित हैं। इन दोनों पुनरीक्षण आवेदनों का निर्णय सूरत के द्वितीय अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश द्वारा दिनांक 10.01.2012 के एक सामान्य आदेश द्वारा किया गया था। इस आदेश द्वारा, द्वितीय अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश ने उन तथ्यों के विवरण में गए जो धारा 173 (8) के तहत आवेदन में आरोप लगाए गए थे और पाया कि आगे की जांच के लिए एक मामला बनाया गया था। तदनुसार, उन्होंने कहाः

" उपरोक्त उल्लिखित चर्चा के अनुसार, यह देखा जा सकता है कि उक्त अपराध की जांच के दौरान इन सभी मामलों में कोई प्रभावी जांच या चर्चा नहीं की गई है और इसके अलावा, यहां यह बहुत उल्लेखनीय है कि जिन मामलों के लिए इन संशोधन आवेदनों में प्रार्थना की गई है, ये सभी मामले इस मामले की शिकायत से संबंधित हैं। इसलिए, यह बहुत आवश्यक है कि एक विनुभाई हरिभाई मालवीय और ओआरएस को पूरा करने के उद्देश्य से।

वी.

गुजरात राज्य और ए. एन. आर. [आर. एफ. नरीमन, जे.]

इस शिकायत की विस्तृत और पूरी जांच, इन सभी मामलों की भी जांच होनी चाहिए। लेकिन उक्त उद्देश्य के लिए, यह आवश्यक नहीं है कि एक अलग शिकायत दर्ज की जाए और उसके बाद

इसकी जाँच की जाए। लेकिन इस जाँच को वर्तमान मामले की शिकायत में भी शामिल करके, यदि इस तरह की जाँच में यह पता चलता है कि कोई अपराध किया गया था, तो उचित है। ऐसे व्यक्ति के खिलाफ आपराधिक कार्यवाही शुरू की जा सकती है।

6. इस आदेश के अनुसार, जांच अधिकारी आर. ए. मुंशी (इसके बाद आई. ओ. के रूप में संदर्भित) को जांच सौंपी गई थी। मुंशी ") 06.03.2012 पर, जिन्होंने फिर दो और जांच रिपोर्ट प्रस्तुत की- एक तीन दिनों के भीतर, दिनांक 09.03.2012 और दूसरी एक

दिनांक 10.04.2012, जिसमें आई. ओ. मुंशी ने दायर किए गए 173 (8) आवेदनों में उल्लिखित तथ्यों पर गौर किया। 13.06.2012 पर, मूल अभियुक्त ने उच्च न्यायालय में दायर 2012 का विशेष आपराधिक आवेदन No.727 वापस ले लिया, जो उस आदेश को चुनौती देते हुए दायर किया गया था जिसके द्वारा विद्वान पुनरीक्षण न्यायालय ने आरोपमुक्त करने को अस्वीकार करने के आदेश की पुष्टि की थी

मजिस्ट्रेट के समक्ष आरोपमुक्त करने के लिए उचित आवेदन दायर करने की स्वतंत्रता के साथ। उच्च न्यायालय ने आपराधिक संशोधन की सुनवाई की

आपराधिक विविध के साथ 2012 का आवेदन No.44

2012 का आवेदन No.1746 और इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि, कानून के मामले के रूप में, मजिस्ट्रेट के पास आरोप पत्र दायर करने और संज्ञान लेने के बाद आगे की जांच का आदेश देने की कोई शक्ति नहीं है। उच्च न्यायालय ने आई. ओ. मुंशी को और फटकार लगाते हुए कहा कि अंतरिम जांच रिपोर्ट, विशेष लोक अभियोजक के माध्यम से और मजिस्ट्रेट को नहीं, बल्कि अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश को स्वयं प्रस्तुत करना दुर्भावनापूर्ण है, जैसे कि आई. ओ. मुंशी आरोपी व्यक्तियों को बाध्य करना और/या उनका पक्ष लेना चाहते हैं। उच्च न्यायालय ने आगे पाया कि दो अंतरिम जांच रिपोर्टों ने वस्तुतः आरोपी व्यक्तियों को बरी कर दिया, और इसलिए, उच्च न्यायालय ने विद्वान द्वितीय अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश दिनांक 10.01.2012 के फैसले को दरकिनार कर दिया, और परिणामस्वरूप, दो और अंतरिम जांच रिपोर्ट। जहाँ तक 2011 के आपराधिक संशोधन आवेदन No.346 का संबंध है (जिसका निपटारा विद्वान द्वितीय अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश ने आपराधिक संशोधन में अपने आदेश के आलोक में गुण-दोष पर विचार किए बिना किया था)। 2011 के आवेदन (आई. डी. 1) का संबंध था, उच्च न्यायालय ने इसे विद्वान द्वितीय अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश को नए सिरे से विचार करने के लिए भेज दिया, जो तब निर्णय लेंगे कि क्या एक एफ. आई. आर. दर्ज की जानी चाहिए, जहां तक आगे के लिए आवेदनों में निहित आरोप हैं।

जांच की जा रही है। उपरोक्त रिमांड के अनुसार, [2019] 15 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश ने सीआरपीसी की धारा 156 (3) के तहत योग्यता के आधार पर आवेदन को खारिज कर दिया है, जिसके खिलाफ 2016 का विशेष आपराधिक आवेदन दायर किया गया है और निपटान की प्रतीक्षा कर रहा है। पक्षों के बीच लंबित कई अन्य कार्यवाहियों के बारे में हमें बताया गया है, जिनसे हमें इस मामले में तत्काल कोई सरोकार नहीं है।

सी. आर. पी. सी. के प्रावधानों की संख्या, और हमारे कई निर्णय, कि उच्च न्यायालय कानून के मामले में पूरी तरह से गलत था, यह अभिनिर्धारित करने में कि एक मजिस्ट्रेट के पास किसी अपराध की आगे की जांच का आदेश देने की कोई शक्ति नहीं होगी। उन्होंने आई. डी. 2 दिनांकित एफ. आई. आर., आई. डी. 1 दिनांकित आरोप-पत्र की सामग्री को बहुत विस्तार से पढ़ा और राजस्व आयुक्त द्वारा किए गए संचार पर बहुत अधिक भरोसा किया। गुजरात कलेक्टर, सूरत को दिनांक 15.03.2011। उनके अनुसार, इस संचार की सामग्री से पता चलता है कि इसमें कोई संदेह नहीं है कि इस मामले के तथ्यों पर आगे की जांच की जानी चाहिए थी, जिसमें, भूमि हड़पने वाले माफिया द्वारा उनके मुवक्किलों के साथ भारी धोखाधड़ी की गई थी, और यह न्याय का उपहास होगा यदि द्वितीय अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश के दिनांक 10.01.2012 के फैसले को बरकरार नहीं रखा गया था। उनके अनुसार, उच्च न्यायालय का निर्णय इस तथ्य से बहुत प्रभावित था किः (1) आई. ओ. मुंशी ने बहुत जल्दी आगे की अंतरिम जांच रिपोर्ट प्रस्तुत की, और (2) इन रिपोर्टों को मजिस्ट्रेट के बजाय अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश को प्रस्तुत किया; जिसके परिणामस्वरूप बच्चे को नहाने के पानी के साथ बाहर फेंक दिया गया। इसलिए उन्होंने हमसे दूसरे अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश के आदेश को बरकरार रखने का आग्रह किया, जिन्होंने आगे की जांच का आदेश दिया, क्योंकि इससे इस मामले में सच्चाई सामने आएगी।

8. दूसरी ओर, श्री बसंत और श्री नवारे, उत्तरदाताओं की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ताओं ने इसका समर्थन किया

निचली अदालत और उच्च न्यायालय के फैसले में कहा गया है कि इसमें कोई संदेह नहीं है कि क्रॉस-एफ़. आई. आर. दायर किए बिना, जो प्रस्तुत करने की मांग की गई थी, वह सबूत है जो शायद किए जाने वाले मुकदमे में बचाव के बराबर हो सकता है, जो अस्वीकार्य होगा। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि किसी भी स्तर पर कार्यवाही को रद्द करने के लिए कोई आवेदन नहीं दिया गया था, और जाहिर है, संज्ञान लेने के एक साल से अधिक समय बाद किया गया एक विलंबित आवेदन, आगे की जांच के माध्यम से प्राप्त करने के लिए तथ्य जो प्राथमिकी से पूरी तरह से अलग थे, पूरी तरह से विनुभाई हरिभाई मालवीय और ओआरएस के बाहर होंगे।

सी. आर. पी. सी. की धारा 173 (8) के तहत मजिस्ट्रेट की शक्ति। उन्होंने कई निर्णयों, और विशेष रूप से इस न्यायालय के हाल के निर्णयों पर भरोसा किया, ताकि यह दिखाया जा सके कि संज्ञान के बाद और विशेष रूप से समन के बाद

अभियुक्त को जारी किया जाता है, और अभियुक्त इस तरह के समन के अनुसार उपस्थित होता है, मजिस्ट्रेट के पास कोई स्वतः संज्ञान शक्ति नहीं होती है, और न ही उसे अभियुक्त द्वारा स्थानांतरित किया जा सकता है।

अभियुक्त, कार्यवाही के इस चरण में आगे की जाँच के लिए।

9. इसलिए इस मामले में कानून का सवाल यह उठता है कि क्या पुलिस द्वारा आरोप पत्र दायर करने के बाद, मजिस्ट्रेट के पास यह शक्ति है कि

आगे की जाँच का आदेश देना, और यदि ऐसा है, तो आपराधिक कार्यवाही के किस चरण तक। 10. सी. आर. पी. सी. को 37 अध्यायों में विभाजित किया गया है। इस मामले में हम बारहवें से सत्रहवें अध्याय से संबंधित हैं। बारहवें अध्याय का शीर्षक है

" पुलिस को जानकारी और जाँच करने की उनकी शक्तियाँ "। अध्याय

XIII का शीर्षक "जांच और परीक्षणों में आपराधिक न्यायालयों का अधिकार क्षेत्र" है। अध्याय XIV "कार्यवाही शुरू करने के लिए शर्तों की आवश्यकता" की बात करता है। अध्याय XV तब "मजिस्ट्रेटों को शिकायतों" की बात करता है। अध्याय XVI का शीर्षक है "पहले की कार्यवाही की शुरुआत"

मजिस्ट्रेट "और अध्याय XVII" आरोप "का नेतृत्व करते हैं। अध्याय XVIII से XXI क्रमशः "सत्र न्यायालय के समक्ष परीक्षण"; "मजिस्ट्रेटों द्वारा वारंट मामलों का परीक्षण"; "समन का परीक्षण-मजिस्ट्रेटों द्वारा मामले"; और सारांश परीक्षण "हैं।

11. सी. आर. पी. सी. की प्रासंगिक धाराएँ जिनके साथ हम हैं

संबंधित निम्नानुसार हैं:

" 156. संज्ञेय मामले की जाँच करने की पुलिस अधिकारी की शक्ति।

(1) पुलिस स्टेशन का प्रभारी कोई भी अधिकारी, मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना, किसी भी संज्ञेय मामले की जांच कर सकता है, जिसमें ऐसे स्टेशन की सीमा के भीतर स्थानीय क्षेत्र पर अधिकार क्षेत्र रखने वाले न्यायालय को जांच करने या प्रयास करने की शक्ति होगी।

अध्याय XIII के प्रावधानों के तहत।

XXX XXX XXX

(3) धारा 190 के तहत सशक्त कोई भी मजिस्ट्रेट आदेश दे सकता है।

ऊपर उल्लिखित ऐसी जांच।

XXX XXX XXX

173. पूरा होने पर पुलिस अधिकारी की रिपोर्ट

जांच पड़ताल की।

XXX XXX XXX (8) उप-धारा के तहत एक रिपोर्ट के बाद इस धारा की किसी भी बात को अपराध के संबंध में आगे की जांच में बाधा नहीं माना जाएगा।

धारा (2) मजिस्ट्रेट को भेज दी गई है और जहां इस तरह की जांच के बाद, पुलिस स्टेशन का प्रभारी अधिकारी

मौखिक या दस्तावेजी साक्ष्य प्राप्त करने पर, वह मजिस्ट्रेट को निर्धारित प्रपत्र में ऐसे साक्ष्य के संबंध में एक और रिपोर्ट या रिपोर्ट भेजेगा और ऐसी रिपोर्ट के संबंध में, जहां तक हो सके, उप-धारा (2) से (6) के प्रावधान लागू होंगे या

रिपोर्ट जैसा कि वे नीचे दी गई रिपोर्ट के संबंध में लागू होते हैं

उप-धारा (2)।

XXX XXX XXX

190. मजिस्ट्रेटों द्वारा अपराधों का संज्ञान। - (1) विषय के अधीन

इस अध्याय के प्रावधानों के अनुसार, प्रथम श्रेणी का कोई मजिस्ट्रेट और उप-धारा (2) के तहत इस संबंध में विशेष रूप से सशक्त द्वितीय श्रेणी का कोई मजिस्ट्रेट किसी भी मामले का संज्ञान ले सकता है।

अपराध -

(क) तथ्यों की शिकायत प्राप्त करने पर जो इस प्रकार का गठन करते हैं

अपराध;

(ख) ऐसे तथ्यों की पुलिस रिपोर्ट पर; (ग) पुलिस अधिकारी के अलावा किसी अन्य व्यक्ति से प्राप्त सूचना पर, या उसकी अपनी जानकारी पर, कि ऐसा अपराध किया गया है।

(2) मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट किसी भी मजिस्ट्रेट को अधिकार दे सकता है।

ऐसे अपराधों की उप-धारा (1) के तहत संज्ञान लेने के लिए जो जांच करने की उसकी क्षमता के भीतर हैं या

कोशिश करें।

XXX XXX XXX

200. शिकायतकर्ता की जाँच। - एक मजिस्ट्रेट ले रहा है

शिकायत पर अपराध का संज्ञान शपथ पर जांचा जाएगा।

शिकायतकर्ता और उपस्थित गवाह, यदि कोई हो, और

ऐसी जाँच के सार को लिखित कर दिया जाएगा और शिकायतकर्ता और गवाहों और मजिस्ट्रेट द्वारा भी हस्ताक्षर किए जाएंगेः

विनुभाई हरिभाई मालवीय और ओआरएस। वी.

गुजरात राज्य और ए. एन. आर. [आर. एफ. नरीमन, जे.]

बशर्ते कि, जब शिकायत लिखित रूप में की जाती है, तो मजिस्ट्रेट को शिकायतकर्ता और शिकायतकर्ता से पूछताछ करने की आवश्यकता नहीं है। गवाह -

(क) यदि कोई लोक सेवक जो अपने आधिकारिक कर्तव्यों के निर्वहन में कार्य कर रहा है या कार्य करने का इरादा रखता है या न्यायालय ने शिकायत की है; या (ख) यदि मजिस्ट्रेट जांच या मुकदमे के लिए मामले को संभालता है -

धारा 192 के तहत एक अन्य मजिस्ट्रेट।

बशर्ते कि यदि मजिस्ट्रेट धारा 192 के तहत मामले की जांच करने के बाद मामले को किसी अन्य मजिस्ट्रेट को सौंप देता है शिकायतकर्ता और गवाहों, बाद वाले मजिस्ट्रेट को उनसे फिर से पूछताछ करने की आवश्यकता नहीं है।

XXX XXX XXX 202. प्रक्रिया के मुद्दे को स्थगित करना। - (1) कोई मजिस्ट्रेट, किसी ऐसे अपराध की शिकायत की प्राप्ति पर, जिसका वह संज्ञान लेने के लिए अधिकृत है या जिसे धारा 192 के तहत उसे सौंप दिया गया है, यदि वह उचित समझता है, [और ऐसे मामले में जहां अभियुक्त उस क्षेत्र से परे किसी स्थान पर रह रहा है जिसमें वह है।

अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करता है] इसके खिलाफ प्रक्रिया के मुद्दे को स्थगित कर देता है

अभियुक्त, और या तो स्वयं मामले की जाँच करता है या किसी पुलिस अधिकारी द्वारा या ऐसे अन्य द्वारा जाँच करने का निर्देश देता है। व्यक्ति जैसा कि वह उचित समझता है, यह तय करने के उद्देश्य से कि आगे बढ़ने के लिए पर्याप्त आधार है या नहीं।

बशर्ते कि जाँच के लिए ऐसा कोई निर्देश नहीं दिया जाएगा -

(क) जहां मजिस्ट्रेट को यह प्रतीत होता है कि अपराध

शिकायत विशेष रूप से सत्र न्यायालय द्वारा सुनवाई योग्य है;

या

(ख) जहाँ किसी न्यायालय द्वारा शिकायत नहीं की गई है, जब तक कि शिकायतकर्ता और उपस्थित गवाह (यदि कोई हो)

धारा 200 के तहत शपथ पर जांच की गई।

(2) उप-धारा (1) के तहत जांच में, मजिस्ट्रेट, यदि वह उचित समझता है, तो शपथ पर गवाह का साक्ष्य ले सकता हैः

बशर्ते कि यदि मजिस्ट्रेट को यह प्रतीत होता है कि शिकायत किया गया अपराध विशेष रूप से सत्र न्यायालय द्वारा विचारण योग्य है, तो वह शिकायतकर्ता से अपने सभी गवाहों को पेश करने और शपथ पर उनकी जांच करने के लिए कहेगा।

(3) यदि उप-धारा (1) के तहत जांच किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा की जाती है जो पुलिस अधिकारी नहीं है, तो उसे उस जांच के लिए बिना वारंट के गिरफ्तार करने की शक्ति के अलावा इस संहिता द्वारा पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी को दी गई सभी शक्तियां होंगी। XXX XXX XXX

204. प्रक्रिया का मुद्दा। - (1) यदि मजिस्ट्रेट की राय में

अपराध का संज्ञान लेने के लिए पर्याप्त आधार है - कार्यवाही, और मामला ऐसा प्रतीत होता है -

(ए) एक समन-मामले में, वह इसके लिए अपना समन जारी करेगा

अभियुक्त की उपस्थिति, या

(ख) एक वारंट-मामले में, वह वारंट जारी कर सकता है, या, यदि वह उचित समझता है, तो समन जारी कर सकता है, ताकि आरोपी को ऐसे अन्य मजिस्ट्रेट के सामने एक निश्चित समय पर पेश किया जा सके या (यदि उसके पास कोई वारंट नहीं है)

स्वयं अधिकारिता) कुछ अन्य मजिस्ट्रेट जिनके पास

अधिकार क्षेत्र।

(2) जब तक अभियोजन पक्ष के गवाहों की सूची दायर नहीं की जाती, तब तक उप-धारा (1) के तहत अभियुक्त के खिलाफ कोई समन या वारंट जारी नहीं किया जाएगा।

(3) लिखित रूप में की गई शिकायत पर शुरू की गई कार्यवाही में, उप-धारा (1) के तहत जारी प्रत्येक समन या वारंट -

ऐसी शिकायत की एक प्रति के साथ।

(4) जब कुछ समय के लिए किसी कानून द्वारा कोई प्रक्रिया-शुल्क या अन्य शुल्क देय होता है, तो शुल्क का भुगतान होने तक कोई प्रक्रिया जारी नहीं की जाएगी और यदि इस तरह के शुल्क का भुगतान उचित समय के भीतर नहीं किया जाता है, तो

मजिस्ट्रेट शिकायत को खारिज कर सकता है। (5) इस धारा की कोई भी बात प्रभावित करने वाली नहीं मानी जाएगी -

धारा 87 के प्रावधान।

12. जैसा कि अध्याय के शीर्षकों से ही पता चलता है कि पुलिस की जांच करने की शक्तियों और पूछताछ में आपराधिक अदालतों के अधिकार क्षेत्र के बीच एक स्पष्ट संबंध है-जिसके बाद प्रक्रिया शुरू हो जाती है। धारा 156 एक पुलिस अधिकारी की शक्ति से संबंधित है"संज्ञेय मामले" दर्ज करें। एक "संज्ञेय मामले" को निम्नानुसार परिभाषित किया गया है -

सी. आर. पी. सी. के 2 (सी) पर निम्नानुसारः

" संज्ञेय अपराध "से ऐसा अपराध अभिप्रेत है जिसके लिए, और

" संज्ञेय मामला "से ऐसा मामला अभिप्रेत है जिसमें एक पुलिस अधिकारी, विनुभाई हरिभाई मालवीय और ओ. आर. एस. में हो सकता है।

धारा 2 (घ) में "शिकायत" पद को निम्नानुसार परिभाषित किया गया हैः

" शिकायत "का अर्थ है इस संहिता के तहत कार्रवाई करने की दृष्टि से मजिस्ट्रेट पर मौखिक या लिखित रूप से किया गया कोई आरोप कि किसी व्यक्ति, चाहे वह ज्ञात हो या अज्ञात, ने कोई अपराध किया है। अपराध , लेकिन इसमें
पुलिस रिपोर्ट शामिल नहीं है।

" धारा 2 (छ) में "पूछताछ" को निम्नानुसार परिभाषित किया गया हैः

" "जांच" का अर्थ है परीक्षण के अलावा प्रत्येक जांच, जिसके तहत किया जाता है

मजिस्ट्रेट या न्यायालय द्वारा यह संहिता;

" "जाँच" को धारा 2 (एच) में निम्नानुसार परिभाषित किया गया हैः

" "जाँच" में एक पुलिस अधिकारी या किसी व्यक्ति (मजिस्ट्रेट के अलावा) द्वारा किए गए साक्ष्य के संग्रह के लिए इस संहिता के तहत सभी कार्यवाही शामिल हैं, जो एक पुलिस अधिकारी द्वारा अधिकृत है।

इस ओर से मजिस्ट्रेट।

13. इसलिए सी. आर. पी. सी. में निहित वैधानिक योजना "जांच" और "परीक्षण" को पानी के तंग डिब्बों में रखती है, जैसा कि "जांच" की परिभाषा से ही पता चलता है। जाँच "एक पुलिस अधिकारी द्वारा साक्ष्य एकत्र करने के उद्देश्य से है, और अन्यथा इस संबंध में मजिस्ट्रेट द्वारा अधिकृत किसी भी व्यक्ति द्वारा, और मुकदमा शुरू होने से पहले के चरण से भी संबंधित है। जांच जो अंततः सी. आर. पी. सी. के तहत एक पुलिस रिपोर्ट की ओर ले जाती है, पुलिस द्वारा की जाने वाली एक जांच है, और "शिकायत" मामलों में स्वयं मजिस्ट्रेट द्वारा की गई जांच में आदेश दिया जा सकता है।

14. पूर्ववर्ती दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 में ऐसा कोई प्रावधान नहीं था जिसके द्वारा पुलिस को आगे की कार्रवाई करने का अधिकार था।

धारा 173 के तहत पुलिस रिपोर्ट के बाद अपराध के संबंध में जांच मजिस्ट्रेट को भेज दी गई है। सितंबर 1969 में विधि मंत्रालय को भेजी गई 41 वीं विधि आयोग की रिपोर्ट (दंड प्रक्रिया संहिता, 1898) (जिसे इसके बाद "विधि आयोग की रिपोर्ट" के रूप में संदर्भित किया गया है) ने धारा 173 में उप-धारा (7) को जोड़ने की सिफारिश की क्योंकि यह निम्नलिखित कारणों से दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 के तहत थीः

" 14.23 . धारा 173 के तहत एक रिपोर्ट आम तौर पर जांच का अंत होती है। कभी-कभी, हालांकि, पुलिस अधिकारी धारा 173 के तहत रिपोर्ट जमा करने के बाद सबूत [2019] 15 एस. सी. आर. पर आता है।

अभियुक्त के अपराध या निर्दोषता पर असर डालना। हमें होना चाहिए। सोचा कि पुलिस अधिकारी उस सबूत को इकट्ठा कर सकता है और भेज सकता है

संबंधित मजिस्ट्रेट को। लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि अदालतें

कभी-कभी संकीर्ण दृष्टिकोण लिया है कि एक बार अंतिम रिपोर्ट धारा 173 के तहत भेजा गया है, पुलिस मामले को नहीं छू सकती है

और जाँच को फिर से नहीं खोल सकते। यह दृश्य एक जगह रखता है

अभियुक्त। धारा 173 में यह स्पष्ट किया जाना चाहिए कि - सक्षम पुलिस अधिकारी ऐसे साक्ष्य की जांच कर सकते हैं और भेज सकते हैं

मजिस्ट्रेट को रिपोर्ट करें। ताजा सामग्री से संबंधित प्रतियाँ

निश्चित रूप से अभियुक्त को प्रस्तुत किया जाना चाहिए।

(जोर दिया गया)

15. दिलचस्प बात यह है कि कुछ का संकीर्ण दृश्य

उच्च न्यायालयों ने जाँच एजेंसी के रास्ते में बाधा डाली थी, जो अभियोजन पक्ष के साथ-साथ अभियुक्त के लिए भी बहुत अनुचित हो सकती है।

16. भारत के संविधान का अनुच्छेद 21 यह स्पष्ट करता है कि

आपराधिक मुकदमों में प्रक्रिया, मौलिक निर्णय के बाद होनी चाहिए श्रीमती मेनका गांधी बनाम भारत संघ और ए. एन. आर. (1978) 1 एस. सी. सी. 248, "सही, न्यायपूर्ण और निष्पक्ष हो और मनमाना, काल्पनिक या दमनकारी न हो" (उसमें पैराग्राफ 7 देखें)। समान रूप से, पुलिस आयुक्त, दिल्ली बनाम। पंजीयक, दिल्ली उच्च न्यायालय, नई दिल्ली (1996) 6 एस. सी. सी. 323 में कहा गया था कि अनुच्छेद 21 किसी व्यक्ति को जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के बहुमूल्य अधिकार की गारंटी देता है जिसे केवल एक निष्पक्ष मुकदमे में कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया का पालन करने पर ही वंचित किया जा सकता है जो अभियुक्त की सुरक्षा का आश्वासन देता है। निष्पक्ष सुनवाई के आश्वासन को न्याय वितरण की पहली अनिवार्यता कहा गया है (उसमें पैराग्राफ 16 देखें)।

17. यह स्पष्ट है कि निष्पक्ष सुनवाई जांच के बाद ही शुरू होनी चाहिए।

अपने आप में निष्पक्ष और न्यायपूर्ण है। चाहे पुलिस द्वारा हो या मजिस्ट्रेट द्वारा, सभी जांच और जांच का अंतिम उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि जिन लोगों ने वास्तव में अपराध किया है, उन पर सही तरीके से मामला दर्ज किया गया है, और जिन्होंने नहीं किया है, उन पर मुकदमा नहीं चलाया गया है। यह न्यूनतम प्रक्रियात्मक आवश्यकता है जो भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 की मौलिक आवश्यकता है, इस पर संदेह नहीं किया जा सकता है। यह घुमक्कड़ है

सी. आर. पी. सी. पर अनुच्छेद 21 की सर्वव्यापीता जिसे सी. आर. पी. सी. के सभी प्रावधानों की व्याख्या को सूचित करने की आवश्यकता है, ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि अनुच्छेद 21 का अक्षर और भावना दोनों में पालन किया जाता है।

विनुभाई हरिभाई मालवीय और ओआरएस। वी.

गुजरात राज्य और ए. एन. आर. [आर. एफ. नरीमन, जे.]

18. पूजा पाल बनाम। यू. ओ. आई. (2016) 3 एस. सी. सी. 135 एक महत्वपूर्ण निर्णय है जो संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत मौलिक अधिकार की बात करता है। "त्वरित सुनवाई" के लक्ष्य को "निष्पक्ष सुनवाई" द्वारा कम करने का संदर्भ। अदालत ने इसे इस प्रकार रखाः

" 83. एक "त्वरित सुनवाई", यद्यपि भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 में निहित जीवन के मौलिक अधिकार का सार "निष्पक्ष सुनवाई" की अवधारणा में एक साथी है, दोनों ही अपरिहार्य हैं।

एक न्यायिक प्रक्रिया के घटक, अंतिम मध्यस्थ के रूप में कानून की अदालत द्वारा न्यायिक निर्णय में समाप्त होने के लिए। वास्तव में त्वरित सुनवाई और निष्पक्ष सुनवाई के अधिकार के बीच एक गुणात्मक अंतर है इतना कि पहले वाले का इनकार अपने आप में नहीं होगा

अभियुक्त के लिए प्रतिकूल, जब निष्पक्ष मुकदमे की अनिवार्यता के खिलाफ खड़ा किया जाता है। मूल रूप से, न्याय न केवल किया जाना है, बल्कि ऐसा प्रतीत होना चाहिए कि किया गया है, किसी भी निष्पक्ष एजेंसी द्वारा आगे की जांच या पुनः जांच का निर्देश देने के लिए एक अदालत के अवशिष्ट अधिकार क्षेत्र, राज्य पुलिस द्वारा जांच के बावजूद, अनिवार्य रूप से लागू किया जाना है यदि वैधानिक एजेंसी पहले से ही प्रभारी है।

जाँच अप्रभावी प्रतीत होती है या है

इसका निर्वहन करने में सक्षम नहीं होने का अनुमान या अनुमान

यह निष्पक्ष, सार्थक और फलदायी रूप से कार्य करता है। चूंकि न्याय के कारण को सर्वोच्च शासन करना पड़ता है, इसलिए एक अदालत खुद को कम नहीं कर सकती है

एक इस्तीफा देने वाला और एक असहाय दर्शक और दूरदर्शी के साथ

परिणाम स्पष्ट रूप से अन्यायपूर्ण, एक दोषपूर्ण स्थिति के सामने

जाँच, एक रिकॉर्ड करने के लिए औपचारिकताओं को विनम्रता से पूरा करें पूर्व निष्कर्ष। न्याय तब एक हताहत बन जाएगा। हालांकि

उचित, निष्पक्ष और निष्पक्षता की कमी की अदालत की संतुष्टि इसकी विश्वसनीयता और विश्वसनीयता को कम करने वाली प्रभावी जांच है

आगे की जाँच के लिए निर्देश के लिए पूर्व शर्त या पुनः जाँच, आरोप पत्र प्रस्तुत करना या मुकदमा लंबित होना किसी भी तरह से निषेधात्मक नहीं हो सकता है।

बाधा। प्रासंगिक तथ्यों और परिवेशक परिस्थितियों का एकमात्र मूल्यांकन और विश्लेषण किया जाना चाहिए ताकि सच्चाई को उजागर करने और पक्षों को न्याय दिलाने के लिए आगे की जांच या पुनः जांच की आवश्यकता का निर्णय लिया जा सके। न्यायालय की प्रमुख चिंता और प्रयास इस आधार पर न्याय सुनिश्चित करना है -

सत्य तथ्यों का, जिनका एक प्रतिबद्ध कार्य के माध्यम से पता लगाया जाना चाहिए,

हल किया गया और एक सक्षम जांच एजेंसी।

अपराध का पता लगाने और निर्णय लेने की अच्छी तरह से सीमांकित रूपरेखा मौजूद है, यदि जांच न तो प्रभावी है और न ही उद्देश्यपूर्ण है और न ही निष्पक्ष है, तो अदालतों का यह गंभीर दायित्व होगा कि वे आगे की जांच का आदेश दें या सत्य का पता लगाने के लिए, जैसा भी मामला हो, पुनः जाँच, ताकि न्याय की विफलता को रोका जा सके। कोई कठोर या लचीले दिशानिर्देश नहीं

और-इस तरह के त्वरित नियमों को एक समान और सार्वभौमिक आह्वान के माध्यम से निर्धारित किया जा सकता है और निर्णय परिचर तथ्यों और परिस्थितियों के लिए सशर्त होना चाहिए, जो मुख्य रूप से

न्याय के कारण की प्रगति की भविष्यवाणी "।

19. सी. आर. पी. सी. में धारा 173 (8) की शुरुआत के साथ, पुलिस विभाग को आगे की जांच करने की शक्ति से लैस किया गया है।

मजिस्ट्रेट को पुलिस रिपोर्ट भेजे जाने के बाद भी। ई जाहिर है, यह शक्ति तब तक जारी रहती है जब तक कि परीक्षण को कहा जा सकता है

एक आपराधिक मामले में नेंस। हमारे सामने परेशान करने वाला सवाल यह है कि धारा 173 के तहत पुलिस को भेजे जाने के बाद मजिस्ट्रेट आगे की जांच का आदेश दे सकते हैं।20. यह ध्यान रखना दिलचस्प है कि आपराधिक शिक्षा संहिता, 1898 के तहत भी, कमलापति त्रिवेदी बनाम। पश्चिम बंगाल राज्य (1980) सी91, इस न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित कियाः

" 50. धारा 169 और 170 पुलिस द्वारा मजिस्ट्रेट को किसी भी रिपोर्ट को प्रस्तुत करने की बात नहीं करते हैं, हालांकि वे बताते हैं कि पुलिस को इस तरह के प्रस्तुत करने के अलावा क्या करना है जब उसे जांच के समापन पर पता चलता है (1) कि आगे को सही ठहराने के लिए पर्याप्त सबूत या संदेह का उचित आधार नहीं है।

अभियुक्त को मजिस्ट्रेट (धारा 169) या (2) के समक्ष प्रस्तुत करना कि उपरोक्त पर्याप्त साक्ष्य या उचित आधार है (धारा 170)। दोनों ही मामलों में पुलिस की अंतिम रिपोर्ट विनुभाई हरिभाई मालवीय और ओआरएस प्रस्तुत की जानी है।

वी.

गुजरात राज्य और ए. एन. आर. [आर. एफ. नरीमन, जे.]

धारा 173 की उप-धारा (1) के तहत मजिस्ट्रेट को।

उस धारा की उप-धारा (3) में आगे यह प्रावधान किया गया है कि पुलिस द्वारा एक रिपोर्ट के मामले में कि आरोपी को उसके बयान पर रिहा कर दिया गया है।

बंधपत्र (जो धारा 169 द्वारा परिकल्पित स्थिति है), मजिस्ट्रेट "ऐसे बंधपत्र के निर्वहन के लिए या अन्यथा ऐसा आदेश देगा जो वह उचित समझे।" अब ऐसी स्थिति में मजिस्ट्रेट के लिए कौन से पाठ्यक्रम खुले हैं? वह, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा अभिनंदन झा बनाम में अभिनिर्धारित किया गया है। दिनेश मिश्रा [(1967) 3 एससीआर 668: एयर

1968 एससी 117: 1968 क्रि एल. जे. 97]:

(1) पुलिस की रिपोर्ट से सहमत होकर कार्यवाही दायर करें; या

(ख) अभिनिर्धारित करें कि साक्ष्य अग्रेषण को उचित ठहराने के लिए पर्याप्त है। अभियुक्त मजिस्ट्रेट के पास जाता है और अपराध का संज्ञान लेता है

शिकायत की।

51. एक के बाद उपयुक्त पाठ्यक्रम पर निर्णय लेना होगा

प्रतिवेदन पर विचार करना और उसकी विषय-वस्तु पर मजिस्ट्रेट का विचार लागू करना। लेकिन फिर हल करने की समस्या यह है कि क्या मजिस्ट्रेट द्वारा पारित आदेश से संबंधित है

पुलिस द्वारा की जाने वाली जाँच पाठ्यक्रम 2 (ए) द्वारा कवर की जाती है। मजिस्ट्रेट द्वारा अन्य दो पाठ्यक्रमों में से प्रत्येक में पारित आदेश, यानी (1) और (2) (बी), जांच के निष्कर्ष का अनुसरण करता है और अधिकारों का निर्धारण करने वाला एक न्यायिक आदेश है। पक्षकारों का (एक ओर राज्य और दूसरी ओर अभियुक्त) अपना दिमाग लगाने के बाद। और यदि ऐसा है, तो हमारे समक्ष कार्यवाही में मजिस्ट्रेट द्वारा पारित आदेश को एक न्यायिक अधिनियम के रूप में वर्णित किया जाना चाहिए और इसलिए एक न्यायालय के रूप में अपनी क्षमता में निष्पादित किया जाना चाहिए।

21. इस निर्णय से जो मान्यता मिलती है वह यह है कि जिस परिस्थिति में मजिस्ट्रेट पुलिस रिपोर्ट से सहमत नहीं होता है, वह जांच का आदेश दे सकता है जो एक पर्यवेक्षक के रूप में उसकी क्षमता में की जाती है।

पुलिस द्वारा की गई जाँच के संबंध में।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

22. वास्तव में, 1973 की सी. आर. पी. सी. के प्रभाव के बाद भी धारा 156 (3) अपरिवर्तित रही है। इस प्रकार, बिहार राज्य में v. जे ए सी।नाना और ओआरएस। (1980) 1 एस. सी. सी. 554, इस न्यायालय ने निर्णय दिया:

" 19. धारा 156 (3) के तहत मजिस्ट्रेट की आगे की जांच का निर्देश देने की शक्ति स्पष्ट रूप से एक स्वतंत्र शक्ति है और यह राज्य सरकार की शक्ति के साथ टकराव में नहीं आती है जैसा कि पहले कहा गया है। मजिस्ट्रेट को प्रदत्त शक्ति

धारा 156 (3) के तहत मजिस्ट्रेट द्वारा भी प्रयोग किया जा सकता है

जाँच अधिकारी द्वारा एक रिपोर्ट प्रस्तुत करने के बाद जो

इसका मतलब यह होगा कि यह मजिस्ट्रेट के लिए स्वीकार नहीं करने के लिए खुला होगा

जाँच अधिकारी का निष्कर्ष और आगे निर्देश

जांच पड़ताल की। यह प्रावधान किसी भी तरह से शक्ति को प्रभावित नहीं करता है।

जाँच अधिकारी के मामले की आगे की जाँच करने के लिए भी धारा 173 (8) में दी गई रिपोर्ट प्रस्तुत करने के बाद।

इसी तरह, सकिरी वासु बनाम में। यू. पी. और अन्य राज्य। (2008) 2

409 , इस न्यायालय ने निर्णय दिया:

" 12. इस प्रकार मोहम्मद में। यूसुफ बनाम। अफाक जहाँ [(2006) 1 एस. सी. सी. 627: (2006) 1 एससीसी (सीआरआई) 460: जे. टी. (2006) 1 एस. सी. 10] इस न्यायालय ने कहा: (एस. सी. सी पी. 631, पैरा 11)

" 11. अतः स्पष्ट स्थिति यह है कि कोई भी न्यायिक मजिस्ट्रेट अपराध का संज्ञान लेने से पहले संहिता की धारा 156 (3) के तहत जांच का आदेश दे सकता है। यदि वह ऐसा करता है, तो वह नहीं है

शिकायतकर्ता की शपथ पर जाँच करें क्योंकि वह शपथ नहीं ले रहा था उसमें किसी भी अपराध का संज्ञान। सक्षम करने के उद्देश्य से

पुलिस जाँच शुरू करने के लिए मजिस्ट्रेट के लिए खुला है

पुलिस को प्राथमिकी दर्ज करने का निर्देश दें। इसमें कुछ भी अवैध नहीं है। ऐसा करना। आखिरकार एफ. आई. आर. दर्ज करने में केवल प्रक्रिया शामिल होती है।

संबंधित जानकारी के सार को दर्ज करने का द्वारा रखी गई पुस्तक में संज्ञेय अपराध का कमीशन

संहिता की धारा 156 (3) के तहत जांच का निर्देश देते हुए कि प्राथमिकी दर्ज की जानी चाहिए, यह पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी का कर्तव्य है कि वह मामले के संबंध में प्राथमिकी दर्ज करे। शिकायतकर्ता द्वारा प्रकट किया गया संज्ञेय अपराध क्योंकि

पुलिस अधिकारी अध्याय में विचार किए गए आगे के कदम उठा सकते हैं

संहिता की बारहवीं उसके बाद ही "। विनुभाई हरिभाई मालवीय और ओआरएस। वी.

गुजरात राज्य और ए. एन. आर. [आर. एफ. नरीमन, जे.]

व्यक्ति को लगता है कि यह उचित नहीं है, ऐसा व्यक्ति दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156 (3) के तहत मजिस्ट्रेट से संपर्क कर सकता है, और यदि मजिस्ट्रेट संतुष्ट है तो वह उचित जांच का आदेश दे सकता है और अन्य कदम उठा सकता है। उचित कदम उठाएँ और ऐसे आदेश पारित करें जो वह उचित जांच सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक समझता है। ये सभी शक्तियाँ एक मजिस्ट्रेट को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156 (3) के तहत प्राप्त होती हैं।

14. धारा 156 (3) में कहा गया हैः

15. धारा 156 (3) दंड प्रक्रिया संहिता के बारहवें अध्याय के तहत अपने कर्तव्यों का पालन करने वाली पुलिस पर मजिस्ट्रेट द्वारा जांच का प्रावधान करती है। मामलों में जहाँ मजिस्ट्रेट को पता चलता है कि पुलिस ने मामले की जाँच करने का अपना कर्तव्य बिल्कुल नहीं निभाया है, या इसे संतोषजनक रूप से नहीं किया है, वह पुलिस को जाँच ठीक से करने का निर्देश जारी कर सकता है, और उसी की निगरानी कर सकता है।

16. धारा 156 (3) के तहत आगे की जांच का आदेश देने की मजिस्ट्रेट की शक्ति एक स्वतंत्र शक्ति है और यह धारा 173 (8) के माध्यम से अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करने के बाद भी मामले की आगे की जांच करने की जांच अधिकारी की शक्ति को प्रभावित नहीं करती है। इसलिए मजिस्ट्रेट जांच को फिर से शुरू करने का आदेश दे सकते हैं।

पुलिस द्वारा अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत करने के बाद भी, बिहार राज्य बनाम। जे. ए. सी. सल्दान्हा [(1980) 1 एससीसी 554: 1980 एससीसी (सीआरआई) 272: ए. आई. आर. 1980 एस. सी. 326] (एस. सी. सी.: ए. आई. आर. पैरा 19)। 17. हमारी राय में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156 (3) मजिस्ट्रेट में ऐसी सभी शक्तियों को शामिल करने के लिए पर्याप्त है जो उचित जांच सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक हैं, और इसमें प्राथमिकी दर्ज करने का आदेश देने और उचित जांच का आदेश देने की शक्ति शामिल है यदि मजिस्ट्रेट संतुष्ट है कि उचित जांच [2019] 15 एस. सी. आर. नहीं की गई है।

पुलिस द्वारा किया जा रहा है या नहीं किया जा रहा है। सी. आर. पी. सी. की धारा 156 (3), हालांकि संक्षेप में कही गई है, हमारी राय में, बहुत व्यापक है और इसमें ऐसी सभी आनुषंगिक शक्तियां शामिल होंगी जो यह सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक हैं कि

उचित जाँच।

18. यह अच्छी तरह से तय किया गया है कि जब किसी प्राधिकरण को शक्ति दी जाती है

कुछ ऐसा करना जिसमें ऐसी आनुषंगिक या निहित शक्तियाँ शामिल हों जो उस काम को उचित तरीके से करना सुनिश्चित करेंगी। दूसरे शब्दों में, जब कानून द्वारा कोई शक्ति स्पष्ट रूप से प्रदान की जाती है, तो अनुदान में निहित रूप से, विशेष उल्लेख के बिना भी, प्रत्येक शक्ति शामिल होती है।

और प्रत्येक नियंत्रण जिसका अस्वीकार अनुदान को स्वयं अप्रभावी बना देगा। इस प्रकार जहां कोई अधिनियम निहित रूप से अधिकारिता प्रदान करता है ऐसे सभी कार्यों को करने या ऐसे साधनों को नियोजित करने की शक्ति भी प्रदान करता है जो इसके निष्पादन के लिए अनिवार्य रूप से आवश्यक हैं।

23. इस प्रकार यह स्पष्ट है कि धारा के तहत मजिस्ट्रेट की शक्ति

यह सुनिश्चित करना कि एक "उचित जाँच" पुलिस द्वारा एक निष्पक्ष और न्यायपूर्ण जाँच के अर्थ में हो- जिसकी निगरानी ऐसे मजिस्ट्रेट को करनी है-भारत के संविधान का अनुच्छेद 21 यह आदेश देता है कि सभी शक्तियाँ आवश्यक, जो आकस्मिक या निहित भी हो सकते हैं, के लिए उपलब्ध हैं

मजिस्ट्रेट एक उचित जांच सुनिश्चित करने के लिए, जिसमें बिना किसी संदेह के, धारा 173 (2) के तहत उसके द्वारा एक रिपोर्ट प्राप्त होने के बाद आगे की जांच का आदेश शामिल होगा; और जब तक मुकदमा शुरू नहीं हो जाता, तब तक आपराधिक कार्यवाही के सभी चरणों में ऐसे मजिस्ट्रेट के पास कौन सी शक्ति बनी रहेगी। वास्तव में, शाब्दिक रूप से भी, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156 (1) में निर्दिष्ट "जांच", की परिभाषा के अनुसार होगी

" धारा 2 (एच) के तहत "जांच" में एक पुलिस अधिकारी द्वारा किए गए साक्ष्य के संग्रह के लिए सभी कार्यवाही शामिल हैं; जो निस्संदेह होगी।

इसमें दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (8) के तहत आगे की जांच के माध्यम से कार्यवाही शामिल है।

24. हालाँकि, श्री बसंत ने देवरपल्ली लक्ष्मीनारायण रेड्डी और अन्य मामलों में तीन न्यायाधीशों की पीठ के फैसले पर दृढ़ता से भरोसा किया। वी. वी.

नारायण रेड्डी और अन्य। (1976) 3 एससीसी 252। यह निर्णय, यह तय करते हुए कि क्या दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 202 (1) का पहला परंतुक उस मामले के तथ्यों पर आकर्षित था, ने अभिनिर्धारित कियाः

" 17. धारा 156 (3) अध्याय XII में शीर्षक के तहत आती हैः " पुलिस को जानकारी और जाँच करने की उनकी शक्तियाँ "; जबकि विनुभाई हरिभाई मालवीय और ओआरएस।

वी.

गुजरात राज्य और ए. एन. आर. [आर. एफ. नरीमन, जे.]

धारा 202 अध्याय XV में है जिसका शीर्षक हैः " में से

मजिस्ट्रेटों को शिकायतें "। पुलिस को आदेश देने की शक्ति

धारा 156 (3) के तहत जांच धारा 202 (1) द्वारा प्रदत्त प्रत्यक्ष जांच की शक्ति से अलग है। दोनों अलग-अलग चरणों में अलग-अलग क्षेत्रों में काम करते हैं। पहला संज्ञान से पहले के चरण में प्रयोग किया जा सकता है, दूसरा संज्ञान के बाद के चरण में जब मजिस्ट्रेट मामले की निगरानी में होता है। यह कहना है कि एक संज्ञेय आयोग के संबंध में शिकायत के मामले में

अपराध, धारा 156 (3) के तहत शक्ति का उपयोग किया जा सकता है

मजिस्ट्रेट के तहत अपराध का संज्ञान लेने से पहले धारा 190 (1) (ए)। लेकिन अगर वह एक बार ऐसा संज्ञान लेता है और अध्याय XV में सन्निहित प्रक्रिया को शुरू करता है, तो वह संज्ञान से पहले के चरण में वापस जाने और धारा 156 (3) का लाभ उठाने के लिए सक्षम नहीं है। यह भी ध्यान दिया जा सकता है कि धारा 156 की उप-धारा (3) के तहत दिया गया आदेश, धारा 156 (1) के तहत जांच की अपनी पूर्ण शक्तियों का प्रयोग करने के लिए पुलिस को अनुस्मारक या सूचना देने की प्रकृति का है। इस तरह की

जाँच में पूरी निरंतर प्रक्रिया शामिल होती है जो

धारा 156 के तहत साक्ष्य के संग्रह के साथ शुरू होता है और धारा 173 के तहत एक रिपोर्ट या आरोप पत्र के साथ समाप्त होता है। दूसरी ओर, धारा 202 एक ऐसे स्तर पर आती है जब मजिस्ट्रेट द्वारा अध्याय XV के तहत कार्यवाही में कुछ साक्ष्य एकत्र किए गए हैं, लेकिन इसे निर्धारित प्रक्रिया में अगले चरण के बारे में निर्णय लेने के लिए अपर्याप्त माना जाता है। ऐसी स्थिति में, मजिस्ट्रेट को धारा 202 के तहत यह तय करने के उद्देश्य से कि क्या इसके लिए पर्याप्त आधार है या नहीं, उस धारा द्वारा सीमित सीमाओं के भीतर एक जांच का निर्देश देने का अधिकार है।

आगे बढ़ रहा है "। इस प्रकार धारा के तहत जांच का उद्देश्य 202 पुलिस रिपोर्ट पर एक नया मामला शुरू करना नहीं है, बल्कि मजिस्ट्रेट को पहले से ही शुरू की गई कार्यवाही को पूरा करने में सहायता करना है।

उसके सामने शिकायत करें।

इस फैसले के बाद तुला राम और ओआरएस में इसका पालन किया गया। वी. किशोर ए (1977) 4 एस. सी. सी. 459 पैराग्राफ 11 और 15 पर।

25. जबकि यह सच है कि धारा 156 (3) अपरिवर्तित रहती है।

1973 की संहिता लागू होने के बाद भी 1973 में एक बहुत ही महत्वपूर्ण जोड़ किया गया है, जिसका नाम धारा 173 (8) है।

1898 संहिता के तहत अस्तित्व में नहीं है। जैसा कि हम पहले भी देख चुके हैं।इसके अलावा, 1973 की दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 2 (एच) एस. सी. आर. 15 को परिभाषित करती है।

" जांच "उसी शब्द में जिसमें पहले की परिभाषा निहित थी

इस अंतर के साथ 1898 की दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 2 (1)

-

कि 1973 की संहिता लागू होने के बाद "जांच" में अब एक पुलिस अधिकारी द्वारा किए गए साक्ष्य के संग्रह के लिए दंड प्रक्रिया संहिता के तहत सभी कार्यवाही शामिल होंगी। सभी में स्पष्ट रूप से धारा 173 (8) के तहत कार्यवाही भी शामिल होगी। इस प्रकार, जब धारा 156 (3) में कहा गया है कि धारा 190 के तहत सशक्त मजिस्ट्रेट ऐसा आदेश दे सकता है। जांच ", ऐसा मजिस्ट्रेट धारा 2 (एच) में निहित" जांच "की परिभाषा को ध्यान में रखते हुए धारा 173 (8) के तहत आगे की जांच का आदेश भी दे सकता है।

26. धारा 2 (एच) पर उपरोक्त निर्णय द्वारा बिल्कुल भी ध्यान नहीं दिया जाता है,

जिसके परिणामस्वरूप कानून में गलत निष्कर्ष निकला कि धारा 156 (3) के तहत शक्ति का प्रयोग केवल पूर्व-संज्ञान चरण में किया जा सकता है। धारा 156 (3) में वर्णित "जांच" में पूरी प्रक्रिया शामिल होगी, जो साक्ष्य के संग्रह के साथ शुरू होती है और तब तक जारी रहती है जब तक कि न्यायालय द्वारा आरोप तय किए जाते हैं, जिस स्तर पर मुकदमा शुरू हुआ कहा जा सकता है। इन कारणों से, कानून का बयान में निहित है

देवरपल्ली लक्ष्मीनारायण रेड्डी (ऊपर) के अनुच्छेद 17 पर भरोसा नहीं किया जा सकता है।

27. राम लाल नारंग बनाम। राज्य (दिल्ली प्रशासन) (1979) 2

एस. सी. सी. 322, एक प्रारंभिक निर्णय है जो आरोप पत्र दायर किए जाने के बाद धारा 173 (8) में निहित शक्ति से संबंधित है। इस न्यायालय ने विधि आयोग की रिपोर्ट और कई निर्णयों को स्वीकार किया जो दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 के तहत बार-बार जांच करने के पुलिस के अधिकार को मान्यता देते हैं। इसके बाद इसने एच. एन. रिशबुद बनाम में सुप्रीम कोर्ट के शुरुआती फैसले का हवाला दिया। दिल्ली राज्य ए. आई. आर. 1955 एस. सी. 196 मामला इस प्रकार है:

“ 17. एच. एन. रिशबुद बनाम दिल्ली राज्य [ए. आई. आर 1955 एस. सी. 196: (1955)

1 एससीआर 1150: 1955 Cri LJ 526] इस न्यायालय ने विचार किया

अदालत द्वारा जाँच करने के बाद भी आगे की जाँच की संभावना

मामले का संज्ञान। यह देखते हुए कि एक पुलिस रिपोर्ट

जांच के परिणामस्वरूप धारा 190 सी. आर. पी. सी. में प्रदान किया गया था।

जिस सामग्री पर संज्ञान लिया गया था, उसे इंगित किया गया था कि यह बनाए नहीं रखा जा सकता है कि एक वैध और कानूनी पुलिस

रिपोर्ट लेने के लिए अदालत के अधिकार क्षेत्र की नींव थी

संज्ञान। यह अभिनिर्धारित किया गया था कि जहां मामले का संज्ञान था, तथ्य, लिया गया था और मामला समाप्त होने के लिए आगे बढ़ा था, विनुभाई हरिभाई मालवीय और ओआरएस।

वी.

गुजरात राज्य और ए. एन. आर. [आर. एफ. नरीमन, जे.]

पूर्ववर्ती जाँच की अयोग्यता ने परिणाम को दूषित नहीं किया जब तक कि न्याय की विफलता नहीं हुई थी। यह कहा गया था कि जाँच में कोई दोष या अवैधता, चाहे कितनी भी गंभीर क्यों न हो, प्रक्रिया की क्षमता पर कोई सीधा असर नहीं डालती थी

इसके बाद अदालत ने कहाः " 20. आपराधिक अदालतों के दिन-प्रतिदिन के कामकाज से परिचित कोई भी व्यक्ति पुलिस की व्यावहारिक आवश्यकता के प्रति सचेत रहेगा।

एक ऐसे मामले की कल्पना करना जहां नई सामग्री सामने आ सकती है जो उन व्यक्तियों को शामिल करेगी जिन पर पहले आरोप नहीं लगाया गया था या जिन्हें दोषमुक्त नहीं किया गया था पहले से ही अभियुक्त व्यक्ति। जब जांच एजेंसी के ध्यान में आता है कि कोई व्यक्ति पहले से ही किसी अपराध का आरोपी है

एक अच्छा बहाना है, क्या यह उस एजेंसी का कर्तव्य नहीं है कि वह बहाना की याचिका की वास्तविकता की जांच करे और उसे एक रिपोर्ट प्रस्तुत करे

मजिस्ट्रेट? आखिरकार जांच एजेंसी के पास इससे भी बड़ा है एक निजी व्यक्ति की तुलना में इसके आदेश पर संसाधन। इसी तरह, जहां ऐसे व्यक्तियों की संलिप्तता जो पहले से ही आरोपी नहीं हैं, जांच एजेंसी के संज्ञान में आती है, तो जांच एजेंसी

चुप नहीं रह सकते और ताजा जानकारी की जांच करने से इनकार कर सकते हैं। यह उनका कर्तव्य है कि वे जाँच करें और मजिस्ट्रेट [2019] 15 एस. सी. आर. को एक रिपोर्ट प्रस्तुत करें।

अन्य व्यक्तियों की भागीदारी। किसी भी मामले में, यह है

एक ही जाँच या मुक़दमे में सभी अभियुक्तों के साथ। यदि वह मामला जिसका उसने पहले संज्ञान लिया है, पहले ही कुछ हद तक आगे बढ़ चुका है, तो वह अपराध का नए सिरे से संज्ञान ले सकता है। नए शामिल अभियुक्त के खिलाफ खुलासा किया और एक अलग मामले के रूप में मामले को आगे बढ़ाया। ऐसी स्थितियों में सी. आर. पी. सी. के प्रावधानों के अनुसार मजिस्ट्रेट को क्या कार्रवाई करनी है, यह एक ऐसा मामला है जिसे मजिस्ट्रेट के विवेक पर छोड़ दिया जाता है। यह आलोचना कि पुलिस द्वारा आगे की जांच अदालत के समक्ष कार्यवाही को प्रभावित करेगी, वास्तव में बहुत महत्वपूर्ण नहीं है, क्योंकि पुलिस जो कुछ भी कर सकती है, आगे की कार्रवाई के संबंध में अंतिम विवेकाधिकार मजिस्ट्रेट के पास है। यह कि अंतिम शब्द मजिस्ट्रेट के पास है, किसी के खिलाफ पर्याप्त सुरक्षा है।

आगे की जाँच करने के लिए पुलिस की शक्ति का अत्यधिक उपयोग या दुरुपयोग। हालाँकि, हमें यह कहने के लिए नहीं समझा जाना चाहिए कि पुलिस को अदालत के समक्ष कार्यवाही के लंबित होने की अनदेखी करनी चाहिए और हर नए तथ्य की जांच करनी चाहिए जो सामने आता है जैसे कि अदालत द्वारा किसी भी अपराध का कोई संज्ञान नहीं लिया गया था। हम सोचते हैं कि मजिस्ट्रेट और न्यायपालिका की स्वतंत्रता के हित में, आपराधिक न्याय के प्रशासन की शुद्धता के हित में और विभिन्न एजेंसियों और संस्थानों के समुदाय के हित में जिन्हें इस तरह के विभिन्न चरणों के लिए सौंपा गया है।

21. जैसा कि हम पहले देख चुके हैं, सी. आर. पी. सी., 1898 में ऐसा कोई प्रावधान नहीं था जो स्पष्ट रूप से या आवश्यक निहितार्थ से मजिस्ट्रेट द्वारा मामले का संज्ञान लेने के बाद पुलिस के आगे की जांच करने के अधिकार को बाधित करता हो। न तो धारा 173 और न ही धारा 190 हमें यह ठहराने के लिए प्रेरित करती है कि मजिस्ट्रेट द्वारा अपराध का संज्ञान लेते हुए आगे की जांच करने की पुलिस की शक्ति समाप्त हो गई थी। अभ्यास, सुविधा और प्रधानता प्राधिकरण ने नए विनुभाई हरिभाई मालवीय और ओआरएस की खोज पर बार-बार जांच की अनुमति दी।

वी.

गुजरात राज्य और ए. एन. आर. [आर. एफ. नरीमन, जे.]

तथ्य। हमारे विचार में, इसके बावजूद कि एक मजिस्ट्रेट ने लिया था

अधीन प्रस्तुत पुलिस रिपोर्ट पर अपराध का संज्ञान

1898 संहिता की धारा 173, पुलिस का आगे बढ़ने का अधिकार जाँच समाप्त नहीं हुई थी और पुलिस इस तरह का अभ्यास कर सकती थी

जब नई जानकारी सामने आती है तो जितनी बार आवश्यक हो उतनी बार सही।

जहाँ पुलिस आगे की जाँच करना चाहती थी,

पुलिस न्यायालय के प्रति अपना सम्मान और सम्मान व्यक्त कर सकती थी

आगे की जांच करने के लिए इसकी औपचारिक अनुमति की मांग करना।

(जोर दिया गया)

28. संघ लोक सेवा आयोग बनाम। एस. पापैया (1997)

7 एस. सी. सी. 614, इस न्यायालय ने एक ऐसे मामले पर विचार किया जिसमें केंद्रीय जांच ब्यूरो (जिसे इसके बाद "सी. बी. आई". के रूप में संदर्भित किया गया है) ने एक समापन रिपोर्ट प्रस्तुत की थी। इसके बाद इसने भगवंत सिंह बनाम में तीन न्यायाधीशों की पीठ के फैसले का हवाला दिया। पुलिस आयुक्त और एन. आर. (1985) 2 एससीसी

357 , जिसमें इस न्यायालय ने कहा कि एक मजिस्ट्रेट, धारा 173 के तहत पुलिस की रिपोर्ट से निपटने में, तीन पाठ्यक्रमों में से एक को अपना सकता है-(1) वह रिपोर्ट को स्वीकार कर सकता है और कार्यवाही को छोड़ सकता है; या (2) वह रिपोर्ट से असहमत हो सकता है, अपराध का संज्ञान ले सकता है और प्रक्रिया जारी कर सकता है; या (3) वह धारा 156 (3) के तहत पुलिस द्वारा आगे की जांच करने का निर्देश दे सकता है। अदालत ने तब यह निर्णय दिया कि जहां शिकायतकर्ता, यानी संघ लोक सेवा आयोग द्वारा पुलिस की समापन रिपोर्ट के खिलाफ आपत्तियां दी गई हैं, मजिस्ट्रेट, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (8) के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए, सीबीआई को आगे बढ़ने का निर्देश दे सकता है।

मामले की जांच करें और शिकायतकर्ता द्वारा उठाई गई आपत्तियों को ध्यान में रखते हुए आगे के साक्ष्य एकत्र करें (उसमें पैराग्राफ 13 देखें)।

29. हसनभाई वलीभाई कुरैशी बनाम। गुजरात राज्य और अन्य।

(2004) 5 एस. सी. सी. 347 एक महत्वपूर्ण निर्णय है जो आपराधिक कार्यवाही में देरी के साथ आगे की जांच को संतुलित करने की आवश्यकता से संबंधित है। यदि नए तथ्य सामने आने पर आगे की जांच की आवश्यकता है, तो न्याय का हित सर्वोपरि है और कार्यवाही में किसी भी देरी से बचने की आवश्यकता को कम करता है। इसलिए न्यायालय ने कहाः

" 11. इस सवाल पर आते हैं कि क्या आगे की जांच है

जांच एजेंसी या अदालत के हाथों में होना चाहिए

इस आधार पर नहीं बंधा जाए कि आगे की जांच हो सकती है

मुकदमे में देरी करें, क्योंकि अंतिम उद्देश्य सच्चाई तक पहुंचना है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

12. संहिता की धारा 173 की उप-धारा (8) आगे की जांच की अनुमति देती है, और यहां तक कि अदालत के किसी भी निर्देश को अस्वीकार करती है, इसलिए यह पुलिस के लिए उचित जांच करने के लिए खुला है, भले ही अदालत ने पहले प्रस्तुत की गई पुलिस रिपोर्ट के आधार पर किसी भी अपराध का संज्ञान लिया हो। इससे भी अधिक, यदि इस मामले में, पुलिस विभाग के प्रमुख भी संतुष्ट नहीं थे

औचित्य या जांच का तरीका और प्रकृति पहले से ही आयोजित किया गया।

13. राम लाल नारंग बनाम। राज्य (दिल्ली प्रशासन) [(1979) 2 एससीसी 322: 1979 एस. सी. सी. (सी. आर. आई) 479: ए. आई. आर. 1979 एस. सी. 1791] इस न्यायालय द्वारा यह टिप्पणी की गई थी कि आगे की जांच पूरी तरह से खारिज नहीं की गई है। केवल इसलिए कि न्यायालय द्वारा संज्ञान लिया गया है। जब परीक्षण के दौरान दोषपूर्ण जांच सामने आती है, तो इसे आगे की जांच द्वारा ठीक किया जा सकता है, यदि परिस्थितियाँ इसकी अनुमति देती हैं। यह आम तौर पर वांछनीय होगा और इस मामले में और भी अधिक,

कि पुलिस को अदालत को सूचित करना चाहिए और औपचारिक मांग करनी चाहिए

केवल शीघ्र विचारण की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए मामले पर चुप रहने के बजाय नए तथ्य सामने आने पर आगे की जांच करने की अनुमति क्योंकि उचित जांच के दौरान पाए गए वास्तविक या वास्तविक अपराधों के लिए एक प्रभावी परीक्षण उतना ही प्रासंगिक, वांछनीय और आवश्यक है जितना कि अदालतों द्वारा मामले का शीघ्र निपटान। कानून में उपरोक्त स्थिति को देखते हुए, यदि आगे की जांच की आवश्यकता है, तो वही कर सकता है

निश्चित रूप से कानून द्वारा निर्धारित के रूप में किया जाए। केवल यह तथ्य कि मुकदमे के समापन में और देरी हो सकती है, आगे की जांच के रास्ते में खड़ा नहीं होना चाहिए यदि इससे अदालत को सच्चाई तक पहुंचने और वास्तविक और पर्याप्त के साथ-साथ प्रभावी न्याय करने में मदद मिलेगी। हम स्पष्ट करते हैं कि हमने इस पर कोई अंतिम राय व्यक्त नहीं की है।

मामले के गुण "। 1

30. हेमंत धस्माना बनाम। सी. बी. आई और ए. एन. आर. (2007) 1 एस. सी. सी. 536, न्यायालय ने पापैया (ऊपर) का अनुसरण किया और अभिनिर्धारित कियाः

" 16. यद्यपि उक्त उप-धारा, विशिष्ट शब्दों में, आगे आदेश देने के लिए न्यायालय की शक्तियों का उल्लेख नहीं करती है।

रामा चौधरी बनाम में कानून के बयान को मंजूरी दी गई थी। बिहार राज्य 6 एस. सी. सी. 346 (पैराग्राफ 14 से 19 तक) और समाज परिवर्तन समुद्र और। कर्नाटक राज्य और अन्य। (2012) 7 एस. सी. सी. 407 (पैराग्राफ 58 पर)।

विनुभाई हरिभाई मालवीय और ओआरएस। वी.

गुजरात राज्य और ए. एन. आर. [आर. एफ. नरीमन, जे.]

जाँच, पुलिस की आगे की कार्रवाई करने की शक्ति उसमें परिकल्पित जांच को गति दी जा सकती है

अदालत का उदाहरण। जब ऐसा कोई आदेश किसी अदालत द्वारा पारित किया जाता है, जिसके पास ऐसा करने का अधिकार क्षेत्र होता है, तो इसमें हस्तक्षेप करना पुनरीक्षण शक्तियों का उचित प्रयोग नहीं होगा क्योंकि आगे की जांच केवल न्याय के उद्देश्यों के लिए होगी। आगे की जाँच के बाद, ऐसा करने वाला प्राधिकरण

जाँच या तो एक ही निष्कर्ष पर पहुँच सकती है और इसे दोहरा सकती है या यह एक अलग निष्कर्ष पर पहुँच सकती है। इस तरह के विस्तार के दौरान

जाँच, अधिकारी या तो उसी सामग्री पर या अन्य सामग्री पर कार्य कर सकते हैं जो उनके ध्यान में आ सकती है। यह जाँच एजेंसी पर है कि वह अपनी शक्ति का प्रयोग करे जब उसे उस रास्ते पर वापस लाया जाए। यदि वे उसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं, तो यह उन व्यक्तियों के लिए अतिरिक्त लाभप्रद होगा जिनके खिलाफ आरोप लगाए गए थे, और यदि आरोप फिर से झूठे पाए जाते हैं तो शिकायतकर्ता मुसीबत में पड़ जाएगा। अतः किसी भी दृष्टिकोण से विशेष न्यायाधीश का निर्देश न्याय के उद्देश्यों के लिए फायदेमंद होगा। उच्च न्यायालय के लिए यह भविष्यवाणी करना जल्दबाजी होगी कि जांच अधिकारी आगे कोई सामग्री एकत्र नहीं कर पाएगा। यह एक ऐसा क्षेत्र है जिसे सर्वेक्षण और पुनः जाँच करने के लिए जांच अधिकारी पर छोड़ दिया जाना चाहिए था।

17. भगवंत सिंह बनाम। कॉम. पुलिस [(1985) 2 एस. सी. सी.

(1) अदालत रिपोर्ट को स्वीकार कर सकती है और कार्यवाही को छोड़ सकती है; या (2) न्यायालय रिपोर्ट से असहमत हो सकता है और अपराध का संज्ञान ले सकता है और प्रक्रिया जारी कर सकता है यदि उसका विचार है कि आगे बढ़ने के लिए पर्याप्त आधार है; या

(3) अदालत पुलिस द्वारा आगे की जांच करने का निर्देश दे सकती है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

" 16. इसलिए, अब स्थिति अच्छी तरह से तय हो गई है कि धारा 173 (2) के तहत पुलिस रिपोर्ट प्राप्त होने पर एक मजिस्ट्रेट संहिता की धारा 190 (1) (बी) के तहत अपराध का संज्ञान लेने का हकदार है, भले ही पुलिस रिपोर्ट इस प्रभाव से हो कि आरोपी के खिलाफ कोई मामला नहीं बनता है। मजिस्ट्रेट जाँच के दौरान पुलिस द्वारा जांचे गए गवाहों के बयानों को ध्यान में रख सकता है और शिकायत किए गए अपराध का संज्ञान ले सकता है और अभियुक्त को प्रक्रिया जारी करने का आदेश दे सकता है। धारा 190 (1) (बी) में यह नहीं कहा गया है कि मजिस्ट्रेट किसी मामले का संज्ञान ले सकता है। अपराध केवल तभी होता है जब जाँच अधिकारी यह राय देता है कि जाँच ने अभियुक्त के खिलाफ मामला बना लिया है। द.

मजिस्ट्रेट द्वारा निकाले गए निष्कर्ष को नजरअंदाज कर सकते हैं

जाँच अधिकारी और स्वतंत्र रूप से जाँच से सामने आने वाले तथ्यों पर अपना दिमाग लगाते हैं और मामले का संज्ञान लेते हैं, यदि वह उचित समझता है, तो धारा 190 (1) (बी) के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए और आरोपी को प्रक्रिया जारी करने का निर्देश देता है।

19. संघ लोक सेवा आयोग बनाम। एस. पापैया [(1997)

7 एस. सी. सी. 614 1997 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 1112] एक दो-न्यायाधीशों की पीठ संहिता की धारा 173 (8) के दायरे पर विस्तार से विचार किया गया। डॉ. ए. एस. आनंद, जे. (तत्कालीन विद्वान मुख्य न्यायाधीश के रूप में) ने संहिता की धारा 173 (8) निकालने के बाद इस प्रकार टिप्पणी की हैः (एससीसी

पीपी। 620-21 , पैरा 13)

" मजिस्ट्रेट, इस प्रकार दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (8) के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए सी. बी. आई. को मामले की आगे की जांच करने और आपत्तियों को ध्यान में रखते हुए आगे के सबूत एकत्र करने का निर्देश दे सकता है।

अपीलार्थी द्वारा जाँच के लिए उठाई गई और जाँच अधिकारी द्वारा प्रस्तुत की जाने वाली 'नई' रिपोर्ट को नियंत्रित किया जाएगा -

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 की उप-धारा (2) से (6)। " " "

31. समाज परिवर्तन समुद्र (ऊपर) में, तीन न्यायाधीशों की पीठ की अदालत ने आंध्र प्रदेश और अटाका में अवैध खनन से निपटने के दौरान, सीबीआई को एक केंद्रीय विनुभाई हरिभाई मालवीय और ओआरएस के रूप में पहले से ही लंबित और अन्य सक्षम अदालत या जांच एजेंसी द्वारा जांच की जा रही निजी शिकायतों के पूरे मामले की जांच करने का निर्देश जारी किया।

वी.

गुजरात राज्य और ए. एन. आर. [आर. एफ. नरीमन, जे.]

बकाया समिति की रिपोर्ट ने राज्यों के अवैध खनन के बारे में नए तथ्यों का खुलासा किया। आपराधिक जाँच तंत्र-सी. आर. पी. सी. की समीक्षा में, इस न्यायालय ने निर्णय दियाः

" 27. एक बार जांच के अनुसार किया जाता है

सी. आर. पी. सी. के प्रावधान, एक पुलिस अधिकारी एक रिपोर्ट दायर करने के लिए बाध्य है

सक्षम अधिकारिता के न्यायालय के समक्ष, जैसा कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के तहत विचार किया गया है, जिस पर मजिस्ट्रेट अपराध का मुकदमा चलाने के लिए आगे बढ़ सकता है, यदि वे ऐसे न्यायालय द्वारा विचारण योग्य थे या

सत्र न्यायालय में मामला। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि धारा 173 (8) सी. आर. पी. सी. के प्रावधान गैर-बाध्यकारी के साथ खुले हैं।

भाषा यह है कि धारा 173 (1) से धारा 173 (7) के प्रावधानों में कुछ भी एक के संबंध में आगे की जांच को बाधित करने के लिए नहीं माना जाएगा

उप-धारा (2) के तहत रिपोर्ट भेजे जाने के बाद अपराध

मजिस्ट्रेट के पास। इस प्रकार, धारा 173 (8) के तहत, जहां

आरोप-पत्र दाखिल कर दिया गया है, उस अदालत को अपराध की आगे की जांच का निर्देश देने का अधिकार क्षेत्र भी प्राप्त है। (रेफ. हेमंत

धस्माना बनाम। सीबीआई [(2001) 7 एससीसी 536: 2001 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 1280] इस शक्ति में ऐसी आवश्यकता सहित कोई अवरोध नहीं हो सकता है।

के रूप में ऐसे किसी भी निर्देश से पहले अभियुक्त को सुनने के लिए बाध्य होना है

XXX XXX XXX 29. जबकि निचली अदालत के पास इस तरह की अंतर्निहित शक्तियां नहीं हैं

धारा 482 सी. आर. पी. सी. या उच्चतम न्यायालय के तहत उच्च न्यायालय का

भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत, जैसे कि यह

हालाँकि, उसके समक्ष किसी मामले की पूर्ण पुनर्निरीक्षण या नए सिरे से जाँच के लिए आदेश, इसके पास प्रयोग करने में पर्याप्त शक्तियाँ हैं -

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 311 और 391 के तहत विवेकाधीन अधिकार क्षेत्र। में।

ऐसे मामले जहां संज्ञान लिया गया है और जहां पर्याप्त

जाँच/मुक़दमे का हिस्सा पहले ही पूरा हो चुका है और कहाँ

आगे की जाँच के लिए एक निर्देश का प्रभाव होगा

मुकदमे में देरी करना, यदि निचली अदालत की राय है कि मामला आरोप में बदलाव आदि के लिए बनाया गया है, तो यह अभ्यास कर सकता है।

थॉमस वी। राज्य [(2006) 12 एससीसी 421: (2007) 2 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 72] 30. फिर भी एक अन्य मामले में, निहित के सिद्धांत की सहायता लेते हुए

इस न्यायालय ने यह भी कहा है कि [2019] 15 एस. सी. आर. का एक स्पष्ट अनुदान।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

वैधानिक शक्ति अपने साथ, आवश्यक निहितार्थ से, ऐसी वैधानिक शक्ति को प्रभावी बनाने के लिए सभी उचित साधनों का उपयोग करने का अधिकार रखती है। इसलिए, वैधानिक प्रावधान का अभाव सशक्तीकरण

मजिस्ट्रेट को प्राथमिकी दर्ज करने का निर्देश देने का कोई परिणाम नहीं होगा और मजिस्ट्रेट फिर भी

एफ. आई. आर. दर्ज करने के लिए सक्षम। (रेफ. सकिरी वासु बनाम। उत्तर प्रदेश राज्य [(2008) 2 एस. सी. सी. 409: (2008) 1 एस. सी. सी. (सी. आर. आई) 440])

31. इस प्रकार, सी. आर. पी. सी. आगे के संचालन के लिए स्पष्ट गुंजाइश छोड़ती है

जांच अधिकारी द्वारा उप-धारा (2) से (6) के संदर्भ में एकत्र किए जाने वाले ऐसे अतिरिक्त तथ्यों और साक्ष्यों के साथ, यदि आवश्यक हो, एक पूरक आरोप पत्र की जांच और दाखिल करना।

न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173। इसे उचित रूप से रखने के लिए, आगे

चालान (धारा 173 सी. आर. पी. सी. के संदर्भ में आरोप पत्र) प्रस्तुत करने के बाद जांच एजेंसी द्वारा जांच की जाती है।

किसी भी मामले में अनुमेय रूप से लेकिन किसी भी स्थिति में अनुमेय नहीं है। XXX XXX XXX

37. हम देख सकते हैं कि किसी मामले की जांच या किसी मामले में आरोप पत्र दायर करने से जांच एजेंसी या अदालत द्वारा शक्ति के प्रयोग का पूर्ण अंत नहीं होता है। कभी-कभी और विशेष रूप से वर्तमान प्रकार के मामलों में, जांच एजेंसी को जांच जारी रखने के लिए अपने विकल्प खुले रखने होते हैं, क्योंकि कुछ अन्य प्रासंगिक तथ्य, आपत्तिजनक सामग्री और यहां तक कि आरोपी के रूप में प्राथमिकी में बताए गए व्यक्तियों के अलावा अन्य व्यक्ति भी अपराध करने में शामिल हो सकते हैं। जांच का मूल उद्देश्य कानून के अनुसार निष्पक्ष और उचित जांच करके सच्चाई को सामने लाना और यह सुनिश्चित करना है कि दोषियों को दंडित किया जाए।

32. गुलजार अहमद आज़मी बनाम। भारत संघ और ओआरएस। (2012) सी. सी. 731, यह न्यायालय, इस तर्क को खारिज करते हुए कि पुलिस द्वारा आगे की कार्रवाई को सर्वोच्च न्यायालय के एक सेवानिवृत्त न्यायाधीश के प्रमुख के तहत बनाए गए एक अतिरिक्त संख्या के साथ सौंपा जाना चाहिए।अन्य अधिकारियों और विशेषज्ञों का मानना था कि यदि सीआरपीसी की धारा 173 (8) के तहत आगे की जांच की मांग की जाती है, तो इसे हमेशा लागू किया जा सकता है।

अंतिम रिपोर्ट दाखिल करना।

33. अब हम विनय त्यागी बनाम के निर्णय पर आते हैं। इरशाद अली ओरस। (2013) 5 एससीसी 762। यह एक और मामला है जो मजिस्ट्रेट को एक रिपोर्ट से सामने आया, जिसमें विनुभाई हरिभाई मालवीय और ओआरएस मामले को बंद करने का अनुरोध किया गया था।

वी.

गुजरात राज्य और ए. एन. आर. [आर. एफ. नरीमन, जे.]

सेंट आरोपी। न्यायालय के फैसले पर पहले विस्तार से चर्चा की गई कि आपराधिक जांच तंत्र को तब तक चालू किया जाता है जब तक कि

जिस पर मुकदमा शुरू होता है। इसके बाद अदालत ने कहाः

" 20. संहिता की योजना के प्रावधानों और प्रासंगिक भाग पर ध्यान देने के बाद, अब हमें जांच का निर्देश देने के लिए अदालत की शक्तियों की जांच करनी चाहिए। जाँच के आदेश विभिन्न रूपों में दिए जा सकते हैं।

और विभिन्न चरणों में। प्राप्त करने के प्रारंभिक चरण में

एफ. आई. आर. या शिकायत, अदालत जांच का निर्देश दे सकती है

संहिता की धारा 156 (3) के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए धारा 156 (1) के प्रावधानों के अनुसार। हो सकती है जांच

निम्नलिखित प्रकार केः

((i) प्रारंभिक जाँच,

((ख) आगे की जाँच,

((ग) नया या नया या पुनर्निरीक्षण।

इसके बाद, जिस प्रश्न का हम सामना कर रहे हैं, उसे सीधे इस प्रकार लिखा गयाः

" 29. अब हम पहले वाले प्रश्न पर आते हैं कि क्या

मजिस्ट्रेट के पास धारा 173 (8) के तहत आगे का निर्देश देने का अधिकार क्षेत्र है।

जांच पड़ताल की। XXX XXX XXX

32. मीनू कुमारी बनाम। बिहार राज्य [(2006) 4 एससीसी 359: (2006) 2 एससीसी (सीआरआई) 310] (एससीसी पीपी। 363-64 , पैरा 11), इस न्यायालय ने उन शक्तियों की व्याख्या की जो एक रिपोर्ट दाखिल करने पर एक मजिस्ट्रेट में निहित हैं।

अपराधों का संज्ञान और जारी करने की प्रक्रिया; या (ii) रिपोर्ट से असहमत हैं और कार्यवाही को छोड़ देते हैं; या (iii) धारा 156 (3) के तहत आगे की जांच का निर्देश दे सकते हैं और

पुलिस आगे की रिपोर्ट बनाएगी।

33. इस प्रकार यह निर्णय स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि

मजिस्ट्रेट के पास धारा 173 (2) के तहत रिपोर्ट दायर किए जाने पर आगे की जांच का निर्देश देने की स्पष्ट शक्ति है और वह संहिता की धारा 156 (3) की सहायता से ऐसी शक्तियों का प्रयोग भी कर सकते हैं। द लुकिंग

संदेह, यदि कोई हो, जो [2019] 15 एस. सी. आर. को व्यापक व्याख्या देने में बना रहा।

धारा 173 (8) को हटा दिया गया और विवाद को समाप्त कर दिया गया।

हेमंत धस्माना बनाम में इस न्यायालय का निर्णय। सीबीआई [(2001) 7 एससीसी 536: 2001 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 1280] जहाँ न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यद्यपि उक्त धारा, विशिष्ट शब्दों में, आगे की जाँच का आदेश देने की न्यायालय की शक्ति का उल्लेख नहीं करती है, फिर भी उसमें परिकल्पित आगे की जाँच करने की पुलिस की शक्ति को न्यायालय के आग्रह पर गति दी जा सकती है। जब ऐसा कोई आदेश न्यायालय द्वारा पारित किया जाता है, जिसके पास ऐसा करने का अधिकार क्षेत्र होता है, तो ऐसे आदेश को उच्च न्यायालय के पुनरीक्षण अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में भी हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए। इस तरह के आदेश होंगे न्याय के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए आम तौर पर लाभप्रद होता है। बिना किसी अस्पष्टता के यह स्पष्ट किया गया कि मजिस्ट्रेट संहिता की धारा 173 (8) के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए सी. बी. आई. को मामले की आगे की जांच करने और अपीलार्थी द्वारा जांच पर उठाई गई आपत्तियों को ध्यान में रखते हुए आगे के साक्ष्य एकत्र करने का निर्देश दे सकता है और जांच अधिकारी द्वारा प्रस्तुत की जाने वाली नई रिपोर्ट संहिता की धारा 173 की उप-धारा (2) से उप-धारा (6) द्वारा नियंत्रित होगी। न्यायालय के लिए संहिता की धारा 173 (8) की प्रतिबंधात्मक व्याख्या करने का कोई अवसर नहीं है। अंतिम रिपोर्ट दाखिल करने के बाद, विद्वान मजिस्ट्रेट जांचकर्ता द्वारा रिकॉर्ड पर रखी गई सामग्री के आधार पर भी संज्ञान ले सकते हैं।

एजेंसी और उसके लिए आगे की जांच का निर्देश देने की अनुमति है। उचित और निष्पक्ष जाँच का संचालन किसी भी आपराधिक जाँच की पहचान है।

34. इन सिद्धांतों के समर्थन में यू. पी. एस. सी. बनाम में इस न्यायालय के निर्णयों का संदर्भ दिया जा सकता है। एस. पापैया [(1997) 7 एस. सी. सी. 614: 1997 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 1112], उड़ीसा राज्य बनाम। महिमा [(2007) 15 एस. सी. सी. 580: (2010) 3 एस. सी. सी. (सी. आर. आई) 611: (2003) 5 स्केल 566], किशन लाल बनाम। धर्मेंद्र बाफना [(2009) 7 एससीसी 685: (2009) 3 एससीसी

(क्रि) 611], महाराष्ट्र राज्य बनाम। शरदचंद्र विनायक डोंगरे [(1995) 1 एससीसी 42: 1995 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 16]

35. हम यहाँ यह भी देख सकते हैं कि एस. पापैया [(1997) 7 एस. सी. सी. 614: 1997 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 1112], मजिस्ट्रेट ने मुख्य रूप से इस आधार पर आवेदक द्वारा दायर पुनर्निरीक्षण के लिए एक आवेदन को खारिज कर दिया था कि उसके पास पहले पारित आदेश की समीक्षा करने का कोई अधिकार नहीं था। इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यह किसी आदेश की समीक्षा का मामला नहीं था, बल्कि आगे की जांच का मामला था जैसा कि विनुभाई हरिभाई मालवीय और ओ. आर. एस. ने विचार किया था।

वी.

गुजरात राज्य और ए. एन. आर. [आर. एफ. नरीमन, जे.]

संहिता की धारा 173 के तहत। इसने आगे की जांच की अनुमति दी और रिपोर्ट दाखिल करने का निर्देश दिया।

36. दिलचस्प और विशेष रूप से कानूनी शिक्षाविदों के प्रश्न का उत्तर देने के लिए, जिस पर हम काम कर रहे हैं, यह ध्यान दिया जा सकता है कि यह न्यायालय, हेमंत धस्माना बनाम में अपना निर्णय सुनाते हुए। सीबीआई [(2001) 7 एससीसी 536: 2001 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 1280] ने विशेष रूप से एस. पापैया [(1997) 7 एस. सी. सी. 614 के निर्णयों का उल्लेख किया हैः 1997 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 1112] और भगवंत सिंह बनाम। कॉम. पुलिस का [भगवंत सिंह बनाम। कॉम. पुलिस विभाग, (1985) 2 एस. सी. सी. 537: 1985 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 267] भगवंत सिंह के तीन न्यायाधीशों की पीठ के फैसले पर भरोसा करते हुए [भगवंत सिंह बनाम। कॉम. पुलिस विभाग, (1985) 2 एस. सी. सी. 537: 1985 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 267], जो संहिता की धारा 173 के संबंध में कानून के विकास के लिए एक मूलभूत दृष्टिकोण प्रतीत होता है, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि मजिस्ट्रेट आगे की जांच के लिए एक आदेश पारित कर सकता है। प्रिंसिपल

उस मामले में सवाल यह था कि क्या मजिस्ट्रेट शिकायतकर्ता को नोटिस दिए बिना धारा 173 (2) के तहत रिपोर्ट दायर करने के बाद कार्यवाही को छोड़ सकता है, लेकिन फैसले के पैरा 4 में, तीन न्यायाधीशों की पीठ ने संहिता की धारा 173 में निहित मजिस्ट्रेट की शक्तियों पर विचार किया। " 37. इस न्यायालय के कुछ निर्णयों में, एक दृष्टिकोण आगे बढ़ाया गया है, [दूसरों के बीच रीता नाग बनाम। डब्ल्यू. बी. राज्य [रीता नाग बनाम। डब्ल्यू. बी. राज्य, (2009) 9 एस. सी. सी. 129: (2009) 3 एस. सी. सी. (सी. आर. आई) 1051], राम नरेश प्रसाद बनाम। झारखंड राज्य [राम नरेश प्रसाद]

वी. झारखंड राज्य (2009) 11 एस. सी. सी. 299: (2009) 3 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 1336 एड। : राम नरेश मामला इस बात का संकेत नहीं देता है कि मजिस्ट्रेट स्वतः आगे की जांच का निर्देश नहीं दे सकता हैः बल्कि यह संकेत देता प्रतीत होता है कि वास्तव में मजिस्ट्रेट ऐसा कर सकता है।] और रणधीर सिंह राणा बनाम। राज्य (दिल्ली प्रशासन) [रणधीर सिंह

राणा वी. राज्य (दिल्ली प्रशासन), (1997) 1 एस. सी. सी. 361] कि एक मजिस्ट्रेट स्वतः संज्ञान लेते हुए आगे की जांच का निर्देश नहीं दे सकता है

संहिता की धारा 173 (8) या संहिता की धारा 167 (2) में निहित बाधा के कारण किसी मामले में प्रत्यक्ष पुनर्निरीक्षण, और यह कि एक मजिस्ट्रेट एक आरोप पत्र दाखिल करने का निर्देश दे सकता है जहां पुलिस एक रिपोर्ट प्रस्तुत करती है कि किसी आरोपी को मुकदमे के लिए भेजने के लिए कोई मामला नहीं बनाया गया था। में लिए गए दृष्टिकोण का सार

ये मामले यह हैं कि एक मजिस्ट्रेट पुनः जांच का निर्देश नहीं दे सकता है और आगे की जांच का निर्देश स्वतः नहीं दे सकता है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

38. हालांकि, हमारे विचार को दिए जाने के बाद

इन निर्णयों में बताए गए सिद्धांतों के अनुसार, हमारा विचार है कि जिस मजिस्ट्रेट के समक्ष संहिता की धारा 173 (2) के तहत एक रिपोर्ट दायर की जाती है, उसे कानून में "आगे" निर्देश देने का अधिकार है।

जाँच "और पुलिस को आगे या पूरक रिपोर्ट प्रस्तुत करने की आवश्यकता होती है। इस न्यायालय की तीन-न्यायाधीशों की पीठ

भगवंत सिंह [भगवंत सिंह बनाम। कॉम. पुलिस विभाग, (1985) 2 एस. सी. सी. 537: 1985 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 267] ने, बिना किसी अनिश्चित शब्दों में, उस सिद्धांत को, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया था, कहा है।

39. रीता नाग बनाम में न्यायालय द्वारा लिया गया विपरीत दृष्टिकोण। डब्ल्यू. बी. राज्य, (2009) 9 एस. सी. सी. 129: (2009) 3 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 1051] और रणधीर सिंह [रणधीर सिंह राणा बनाम। राज्य (दिल्ली प्रशासन), (1997) 1 एस. सी. सी. 361] इस न्यायालय के दृष्टिकोण पर विचार नहीं करते हैं।

भगवंत सिंह [भगवंत सिंह बनाम। कॉम. पुलिस विभाग, (1985) 2 एस. सी. सी. 537: 1985 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 267] भगवंत सिंह में न्यायालय का निर्णय [भगवंत सिंह बनाम। कॉम. में से पुलिस, (1985) 2 एससीसी 537: 1985 हाथ में मुद्दे के संबंध में एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 267] को अपमानजनक नहीं कहा जा सकता है। संहिता की धारा 173 के संदर्भ में मजिस्ट्रेट की शक्ति के दायरे और दायरे पर उस न्यायालय के समक्ष पूरी तरह से बहस की गई और तीन-न्यायाधीशों की पीठ ने निष्कर्ष निकाला जैसा कि पहले नोटिस किया गया था। भगवंत सिंह का अनुसरण करते हुए इस न्यायालय की विभिन्न पीठों द्वारा इसी तरह के विचार लिए गए हैं।

पूर्ववर्ती। कुछ हद तक, रीता नाग में व्यक्त विचार [रीता नाग बनाम। डब्ल्यू. बी. राज्य, (2009) 9 एस. सी. सी. 129: (2009) 3 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 1051], राम नरेश [राम नरेश प्रसाद बनाम। की स्थिति

झारखंड, (2009) 11 एससीसी 299: (2009) 3 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 1336 एड। : राम नरेश मामला इस बात का संकेत नहीं देता है कि मजिस्ट्रेट

आगे की जाँच का निर्देश स्वतः नहीं दे सकतेः बल्कि यह संकेत देता प्रतीत होता है कि वास्तव में मजिस्ट्रेट ऐसा कर सकता है।] और रणधीर सिंह [रणधीर सिंह राणा बनाम। राज्य (दिल्ली प्रशासन), (1997) 1 एस. सी. सी. 361], तथ्यों पर अलग होने के अलावा, होना चाहिए टकटकी निर्णय के सिद्धांत के प्रकाश में जांच की गई।

40. संहिता के प्रावधानों और पूर्व में बताए गए विभिन्न निर्णयों का विश्लेषण करने के बाद, हम विनुभाई हरिभाई मालवीय और ओ. आर. एस. के संदर्भ में मजिस्ट्रेट की शक्तियों के संबंध में निम्नलिखित निष्कर्ष बताएंगे।

वी.

गुजरात राज्य और ए. एन. आर. [आर. एफ. नरीमन, जे.]

संहिता की धारा 173 (8) और धारा 156 (3) के साथ पठित धारा 173 (2):

40.1 . मजिस्ट्रेट के पास "पुनः जांच" का निर्देश देने की कोई शक्ति नहीं है या " पुलिस रिपोर्ट के आधार पर मामले में नए सिरे से जांच शुरू की गई।

40.2 . एक मजिस्ट्रेट के पास संहिता की धारा 173 (6) के संदर्भ में पुलिस रिपोर्ट दर्ज करने के बाद "आगे की जांच" का निर्देश देने की शक्ति है।

: 1985 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 267] तीन न्यायाधीशों की पीठ द्वारा और इस प्रकार पूर्ववर्ती के सिद्धांत के अनुरूप। 40.4 . न तो संहिता की योजना और न ही कोई विशिष्ट प्रावधान

इसमें मजिस्ट्रेट द्वारा ऐसी अधिकारिता के प्रयोग को वर्जित किया गया है। धारा 173 (2) की भाषा का इतना प्रतिबंधात्मक अर्थ नहीं लगाया जा सकता है कि विशेष रूप से धारा 156 (3) के प्रावधानों और धारा 173 (8) की भाषा के बावजूद मजिस्ट्रेट को ऐसी शक्तियों से वंचित किया जा सके। वास्तव में, ऐसी शक्ति को धारा 173 (8) की भाषा में पढ़ना होगा।

40.5 . संहिता एक प्रक्रियात्मक दस्तावेज है, इस प्रकार, इसे एक ऐसा निर्माण प्राप्त करना चाहिए जो न्याय के उद्देश्य को आगे बढ़ाएगा और

विधायी उद्देश्य को प्राप्त करने की मांग की गई। यह खड़ा नहीं होता है

इसका कारण यह है कि विधायिका ने एक रिपोर्ट दाखिल करने के बाद भी पुलिस को आगे की जांच करने की शक्ति प्रदान की, लेकिन अदालत की शक्ति को इस हद तक कम करने का इरादा रखा कि जहां भी मामले के तथ्य और न्याय की मांग की जाती है, अदालत अभी भी जांच एजेंसी को आगे की जांच करने का निर्देश नहीं दे सकती है जो वह अपने दम पर कर सकती है।

40.6 . यह औचित्यपूर्ण प्रक्रिया रही है कि पुलिस को "आगे की जांच" जारी रखने और पूरक आरोप पत्र दायर करने के लिए अदालत की अनुमति लेनी पड़ती है। इस दृष्टिकोण को इस न्यायालय द्वारा कई निर्णयों में अनुमोदित किया गया है। यह उस दृष्टिकोण का समर्थन करेगा जो हम वर्तमान मामले में ले रहे हैं।

48. आपराधिक न्यायशास्त्र में "निष्पक्ष और उचित जांच" अभिव्यक्ति का उद्देश्य या महत्व अंततः क्या है? इसका दोहरा उद्देश्य हैः पहला, जाँच निष्पक्ष, ईमानदार, न्यायपूर्ण और कानून के अनुसार होनी चाहिए; दूसरा, एक निष्पक्ष जाँच पर पूरा जोर सक्षम अधिकार क्षेत्र की अदालत के समक्ष मामले की सच्चाई को सामने लाने के लिए होना चाहिए। एक बार निष्पक्ष जांच के इन दोहरे प्रतिमानों को संतुष्ट करने के बाद, कानून की अदालत के लिए हस्तक्षेप करने की कम से कम आवश्यकता होगी

जाँच, बहुत कम उसे रद्द करें, या इसे किसी अन्य एजेंसी को स्थानांतरित करें। निष्पक्ष और जांच के माध्यम से सच्चाई को सामने लाना कानून के अनुसार अनिवार्य रूप से एक अनुचित, दागी जांच या गलत निहितार्थ के मामलों के आधार को पीछे हटा देगा। इस प्रकार, किसी न्यायालय के लिए यह अपरिहार्य है कि वह जाँच के भाग्य के बारे में एक विशिष्ट आदेश पारित करे, जो उसकी राय में अनुचित, दागी और जाँच के नियमों के तय किए गए सिद्धांतों का उल्लंघन है।

जांच एजेंसियों ने न केवल इसे समझा है, बल्कि इसे "आगे की जांच" करने और अदालत की अनुमति के साथ "पूरक रिपोर्ट" दायर करने के लिए अदालतों की अनुमति लेने के लिए एक कानूनी अभ्यास के रूप में भी अपनाया है। अदालतों ने भी कुछ फैसलों में इसी तरह का दृष्टिकोण अपनाया है। "आगे की जांच" करने और/या "पूरक रिपोर्ट" दायर करने के लिए अदालत से पूर्व अनुमति लेने की आवश्यकता को पढ़ना होगा, और यह है संहिता की धारा 173 (8) के प्रावधानों का आवश्यक निहितार्थ। समकालीन प्रदर्शनी का सिद्धांत पूरी तरह से आएगा

उन मामलों के रूप में ऐसी व्याख्या की सहायता जो लंबे समय से समझे और कार्यान्वित किए जाते हैं, और ऐसी प्रथा जो कानून द्वारा समर्थित है, को व्याख्यात्मक के हिस्से के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए।

प्रक्रिया। 50. इस तरह के दृष्टिकोण का दो अलग-अलग दृष्टिकोणों से समर्थन किया जा सकता हैः सबसे पहले, पूर्ववर्ती के सिद्धांत के माध्यम से, जैसा कि पहले देखा गया था, क्योंकि अक्सर अदालतों ने ऐसा दृष्टिकोण अपनाया है, और, विनुभाई हरिभाई मालवीय और ओआरएस।

दूसरा, जांच एजेंसियां जिन्होंने भी इस सिद्धांत को समझा और लागू किया है। जिन मामलों को कानूनी अभ्यास के रूप में समझा और लागू किया जाता है और नहीं किया जाता है कानून के मूल शासन का विरोध करना अच्छा अभ्यास होगा और इस तरह की व्याख्या समकालीन व्याख्या के सिद्धांत की सहायता से अनुमत होगी। अन्यथा भी, इस तरह की अनुमति लेने के लिए

51. हम पहले ही देख चुके हैं कि धारा 173 (2) के संदर्भ में एक रिपोर्ट प्रस्तुत करने पर "आगे की जांच" का निर्देश देने के लिए विद्वान मजिस्ट्रेट की शक्ति पर कोई विशिष्ट प्रतिबंध नहीं है। कोड से। कोई अन्य दृष्टिकोण या व्याख्या धारा 173 (8) की भाषा और उचित को प्राथमिकता देने के लिए संहिता की योजना के विपरीत होगी।

आपराधिक न्याय का प्रशासन। तय किए गए सिद्धांत

मजिस्ट्रेट जिसे यह तय करना होता है कि प्रस्तुत अभिलेख और दस्तावेजों के आधार पर कोई अपराध किया जाता है या नहीं, और यदि बनाया जाता है, तो मामले को सक्षम अधिकार क्षेत्र के न्यायालय में सौंपने के संबंध में कानून का कौन सा पाठ्यक्रम अपनाया जाना चाहिए या स्वयं मुकदमे के साथ आगे बढ़ें। दूसरे शब्दों में, यह मजिस्ट्रेट की न्यायिक अंतरात्मा है जिससे संतुष्ट होना पड़ता है

उचित निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए जाँच एजेंसी द्वारा रिकॉर्ड और उसके सामने रखे गए दस्तावेजों का संदर्भ कानून के सिद्धांतों के अनुरूप। यह न्याय का उपहास होगा, यदि अदालत को अपने संदेह को दूर करने के लिए "आगे की जांच" का निर्देश देने और जांच एजेंसी को अपने आरोप पत्र को और अधिक प्रमाणित करने का आदेश देने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। संतुष्टि

विद्वत मजिस्ट्रेट की नियुक्ति सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय के समक्ष आगे की कार्यवाही शुरू करने के लिए एक पूर्ववर्ती शर्त है। क्या मजिस्ट्रेट को निर्देश देना चाहिए

" आगे की जाँच "या नहीं" फिर से एक ऐसा मामला है जो किसी दिए गए मामले के तथ्यों पर निर्भर करेगा। विद्वान मजिस्ट्रेट या सक्षम अधिकार क्षेत्र का उच्च न्यायालय "आगे" निर्देश देगा।

किसी दिए गए मामले के तथ्यों पर जांच "या" पुनः जांच "जैसा भी मामला हो। जहाँ मजिस्ट्रेट केवल आगे

जांच, उच्च क्षेत्राधिकार की अदालतें किसी दिए गए मामले के तथ्यों के आधार पर आगे, पुनः जांच या यहां तक कि नए सिरे से जांच का निर्देश दे सकती हैं। यह अदालत का विशिष्ट आदेश होगा जो जांच की प्रकृति को निर्धारित करेगा। इस संबंध में, हम शिवनमूर्ति बनाम में इस न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियों का उल्लेख कर सकते हैं। राज्य [(2010) 12 एससीसी 29: (2011) 1 एस. सी. सी. (सी. आर. आई.) 295] ”

34. पंजाब के और अन्य व्यक्तियों के मामले में इस न्यायालय के 5 विद्वान न्यायाधीशों की एक पीठ। (2014) 3 एस. सी. सी. 92 को उन परिस्थितियों के बारे में एक प्रश्न का सामना करना पड़ा जिनके तहत धारा 319 ई संहिता के तहत शक्ति का उपयोग किसी व्यक्ति को शून्य अपराध के आरोपी के रूप में जोड़ने के लिए किया जा सकता है। उत्तर देते हुए एक विद्वान निर्णय के दौरानउक्त प्रश्न पर, इस न्यायालय ने पहले संवैधानिक जनादेश को स्वीकार किया

संविधान का अनुच्छेद 21 इस प्रकार हैः

" 8. भारत के संविधान के अनुच्छेद 20 और 21 के तहत संवैधानिक जनादेश न्याय के सुचारू प्रशासन के लिए एक सुरक्षात्मक छत्र प्रदान करता है, जिसमें एक निष्पक्ष और प्रभावी सुनवाई सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त प्रावधान किए गए हैं ताकि आरोपी को न्याय न मिले।

अपराध के लिए उस पर मुकदमा चलाने के लिए कानून लागू होने के बाद पूर्वाग्रह से ग्रस्त, लेकिन साथ ही पीड़ितों और बड़े पैमाने पर समाज को समान सुरक्षा भी देता है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि दोषी कानून के चंगुल से दूर न हो। अदालतों के सशक्तिकरण के लिए यह सुनिश्चित करने के लिए कि न्याय का आपराधिक प्रशासन ठीक से काम करता है, कानून को उचित रूप से संहिताबद्ध किया गया था और सीआरपीसी के तहत विधायिका द्वारा संशोधित किया गया था जो यह दर्शाता है कि अदालतों को अंततः सच्चाई का पता लगाने के लिए कैसे आगे बढ़ना चाहिए ताकि एक निर्दोष व्यक्ति दंडित नहीं किया जाता है लेकिन साथ ही, दोषियों को कानून के तहत कानून के दायरे में लाया जाता है। संविधान और हमारे कानूनों के तहत निहित इन आदर्शों के कारण ही कई निर्णय लिए गए हैं, जिनके माध्यम से वास्तविक सत्य का पता लगाने और यह सुनिश्चित करने के लिए नए तरीके और प्रगतिशील उपकरण बनाए गए हैं कि दोषी ऐसा कर सकें।

दंडित किए बिना न जाएँ। "

पैराग्राफ 34 में, इस न्यायालय ने कॉमन कॉज v. भारत का एन (1996) 6 एस. सी. सी. 775, और जब न्यायालय के समक्ष परीक्षण किए जाते हैं; वारंट के मुकदमे-मामले; और समन के मुकदमे-द्वारा मामले

स्ट्रैट्स को निम्नलिखित रूप से शुरू कहा जा सकता हैः

" 34. सामान्य कारण v. भारत संघ (1996) 6 एस. सी. सी. 775: 1997 एससीसी (सीआरआई) 42: ए. आई. आर. 1997 एस. सी. 1539], यह न्यायालय सुनवाई करते हुए

इस मुद्दे के साथः (एस. सी. सी पी. 776, पैरा 1)

विनुभाई हरिभाई मालवीय और ओआरएस। वी.

गुजरात राज्य और ए. एन. आर. [आर. एफ. नरीमन, जे.]

मान लिया जाएगा कि आरोप तय होने पर शुरू हो गया है दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 228 के तहत

संबंधित मामलों में।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973, वारंट मामलों के विचारण के दौरान मजिस्ट्रेटों द्वारा जब मामले अन्यथा स्थापित किए जाते हैं

पुलिस की रिपोर्ट के अनुसार इस तरह के मुकदमे कब शुरू हुए होंगे संबंधित अभियुक्तों के खिलाफ आरोप तय किए जाते हैं

(iii) मजिस्ट्रेटों द्वारा समन मामलों की सुनवाई के मामलों में सुनवाई माना जाएगा कि शुरू हो गया है जब आरोपी जो

मजिस्ट्रेट के सामने पेश होने या लाए जाने के लिए कहा जाता है धारा 251 चाहे वे दोषी हों या उनके पास कोई बचाव हो

बनाते हैं "।

(जोर दिया गया)

अदालत ने तब निष्कर्ष निकालाः

उसके खिलाफ क्या मामला है और यह केवल फंसाने के चरण में है उन आरोपों के बारे में जो अदालत उसे उसी के बारे में सूचित करती है, "मुकदमा"

केवल आरोप तय किए जाने पर शुरू होता है। इसलिए हम ऐसा नहीं करते।

अदालतों द्वारा लिए गए दृष्टिकोण को मंजूरी दें कि एक आपराधिक मामले में, मुकदमा संज्ञान लेने पर शुरू होता है "।

35. फैसले के अनुच्छेद 39 में तब "जांच" का उल्लेख किया गया था।

एक आपराधिक मामले का निम्नानुसारः

" 39. धारा 2 (छ) सी. आर. पी. सी. और ऊपर निर्दिष्ट मामले कानून,

इसलिए, स्पष्ट रूप से वास्तविक जांच से पहले जांच की परिकल्पना करें।

मजिस्ट्रेट या अदालत द्वारा। अतः "पूछताछ" शब्द है - द्वारा मामले की जांच से संबंधित कोई जांच नहीं

जाँच एजेंसी लेकिन मामला [2019] 15 एस. सी. आर. में लाए जाने के बाद जाँच एजेंसी है।

आरोप-पत्र दाखिल करने पर न्यायालय का नोटिस। इसके बाद अदालत पूछताछ करने के लिए आगे बढ़ सकती है और यही कारण है कि जांच का अर्थ इसके अलावा कुछ और है।

वास्तविक मुकदमा "।

इसके बाद पैराग्राफ 54 में "जांच" और "परीक्षण" के बीच एक स्पष्ट अंतर निम्नानुसार निर्धारित किया गया थाः

" 54. हमारी राय में, जांच का चरण किसी पर विचार नहीं करता है

अपने सख्त कानूनी अर्थों में साक्ष्य, और न ही विधायिका इस पर विचार कर सकती थी क्योंकि साक्ष्य का चरण अभी तक नहीं आया है। अदालत के समक्ष एकमात्र ऐसी सामग्री है जो अभियोजन पक्ष द्वारा एकत्र की गई सामग्री है और इस स्तर पर अदालत प्रथम दृष्टया यह पता लगाने के लिए अपना दिमाग लगा सकती है कि क्या किसी व्यक्ति, जो आरोपी हो सकता है, को गलती से आरोपित किए जाने से हटा दिया गया है या अभियोजन एजेंसियों द्वारा जानबूझकर बाहर रखा गया है। यह सुनिश्चित करने के लिए और भी अधिक आवश्यक है कि जांचकर्ता और अभियोजन एजेंसियों ने उन व्यक्तियों को अदालत के समक्ष लाने के लिए निष्पक्ष रूप से काम किया है जो मुकदमे के योग्य हैं और किसी भी व्यक्ति को जानबूझकर बचाने से रोकने के लिए जब उन पर मुकदमा चलाया जाना चाहिए था। यह न्यायिक प्रणाली में विश्वास की शुरुआत करने के लिए आवश्यक है जिसके तहत अदालत को जांच के स्तर पर भी ऐसी शक्तियों का प्रयोग करने का अधिकार होना चाहिए और यही कारण है कि विधायिका ने जानबूझकर अलग-अलग शब्दों का उपयोग किया है, अर्थात् धारा 319 सीआरपीसी में जांच या मुकदमा।

36. उपरोक्त निर्णयों के बावजूद, हाल के तीन निर्णयों में कुछ विसंगत टिप्पणियां सुनाई दीं। अमृतभाई शंभूभाई पटेल

वी. सुमनभाई कांतिबाई पटेल (2017) 4 एस. सी. सी. 177, उस मामले के तथ्यों पर, अपीलकर्ता/मुखबिर ने मुकदमे के अंतिम चरणों में प्रत्यर्थियों के खिलाफ आरोप तय होने के लंबे समय बाद पुलिस द्वारा आगे की जांच के लिए निचली अदालत से धारा 173 (8) के तहत निर्देश की मांग की। न्यायालय ने अपने अंतिम निष्कर्ष में सही कहा कि एक बार आरोप तय करने के साथ मुकदमा शुरू होने के बाद अपराध की जांच या जांच का चरण समाप्त हो जाता है, जिसके परिणामस्वरूप अपराध की आगे की जांच का आदेश नहीं दिया जाना चाहिए। लेकिन इस सरल तथ्य पर अपने निर्णय को स्थगित करने के बजाय, इस न्यायालय ने पैराग्राफ 29 से 34 तक इस न्यायालय के कुछ पहले के फैसलों को पुनर्जीवित किया, जिसमें यह विचार लिया गया था कि मजिस्ट्रेट द्वारा उन मामलों में आगे की जांच का आदेश नहीं दिया जा सकता है, जहां संज्ञान लेने के बाद, आरोपी के पास विनय हरिभाई मालवीय और ओआरएस थे।

वी.

गुजरात राज्य और ए. एन. आर. [आर. एफ. नरीमन, जे.]

जारी की जा रही प्रक्रिया के अनुसरण में लाल। विशेष रूप से, देवरपल्ली हमिनारायन रेड्डी (ऊपर) पर न्यायालय द्वारा दृढ़ता से भरोसा किया गया था। हम पहले ही देख चुके हैं कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 2 (एच) में "जांच" की परिभाषा को बदले बिना इस निर्णय को कैसे प्रस्तुत किया गया था, और इस पहलू पर कानून को सही ढंग से निर्धारित करने के रूप में इस पर भरोसा नहीं किया जा सकता है। इसलिए अदालत ने निष्कर्ष निकालाः

" 49. संहिता की धारा 173 (8) के दायरे और उद्देश्य पर इस न्यायालय की घोषणाओं के समग्र सर्वेक्षण पर और

एकर एकर एकर

यह प्रमाणित करता है कि बाद वाले द्वारा, केवल जांच एजेंसी/अधिकारी को कार्यवाही के चरण को सीमित किए बिना आगे की जांच करने के लिए अधिकृत किया गया है। इस प्रकार जाँच एजेंसी/अधिकारी की यह शक्ति कार्यवाही के किसी भी चरण में उपलब्ध होने के लिए विधायी रूप से अभिप्रेत है। यह है सिफारिश

विधि आयोग की अपनी 41 वीं रिपोर्ट में जो स्पष्ट रूप से संशोधन की शुरुआत की, अपने प्रस्ताव को काफी सीमित कर दिया था

केवल जाँच एजेंसी का सशक्तिकरण।

51. इसके विपरीत, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156,190,200,202 और 204 स्पष्ट रूप से मजिस्ट्रेट की शक्तियों और जांच का निर्देश देने, संज्ञान लेने, आरोप तय करने आदि के मामले में उसके लिए खुले पाठ्यक्रमों की रूपरेखा तैयार करती हैं। हालाँकि मजिस्ट्रेट के पास [2019] 15 एस. सी. आर. हैं।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

आरोप पत्र या समापन रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने के बाद भी पूर्व-संज्ञान स्तर पर धारा 156 (3) के तहत जांच का निर्देश देने की शक्ति, एक बार संज्ञान लेने के बाद और आरोपी व्यक्ति उसके अनुसार उपस्थित होने के बाद, वह किसी भी मामले से वंचित होगा।

आगे की जाँच या तो स्वतः संज्ञान लेने या शिकायतकर्ता/सूचना देने वाले के अनुरोध या अनुरोध पर कार्य करने की क्षमता। द.

धारा 202 के तहत मजिस्ट्रेट द्वारा जांच के लिए निर्देश, शिकायत पर विचार करते समय, हालांकि यह संज्ञान के बाद के चरण में है, यह संतुष्टि प्राप्त करने के लिए जांच की प्रकृति में है कि शुरू की गई कार्यवाही को आगे बढ़ाया जाना चाहिए या नहीं। जाँच के लिए इस तरह का निर्देश आगे की प्रकृति में नहीं है।

संहिता की धारा 173 (8) के तहत विचार के अनुसार जांच।

यदि मजिस्ट्रेट की शक्ति, दंड प्रक्रिया संहिता द्वारा परिकल्पित ऐसी योजना में, संज्ञान के बाद भी आगे की जांच का आदेश देने के लिए है लिया जाता है, अभियुक्त व्यक्ति उपस्थित होते हैं और आरोप तय किया जाता है, स्वीकार किया जाता है या अनुमोदित किया जाता है, उसी के साथ असंगत होगा

अनुमान है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (8) को उसके निगमन की पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए उसे समायोजित करने और आदेश देने के लिए तदनुसार शब्दबद्ध किया गया होगा। एक तरह से, मजिस्ट्रेट के लिए खुले तीन विकल्पों को देखते हुए, एक रिपोर्ट के बाद जांच पूरी होने पर पुलिस द्वारा प्रस्तुत किया गया, जैसा कि भगवंत सिंह में अधिकृत रूप से गिना गया है।

मजिस्ट्रेट को स्वतः संज्ञान लेने या शिकायतकर्ता/मुखबिर के अनुरोध या अनुरोध पर आगे की जांच का निर्देश देने की ऐसी शक्ति, जब संज्ञान लिया जाता है और आरोपी व्यक्ति उपस्थित होता है, प्रक्रिया के अनुसार, जारी या निर्वहन वैधानिक डिजाइन और वितरण के साथ असंगत है, यह अन्यथा धारा 311 और 319 सी. आर. पी. सी., विनुभाई हरिभाई मालवीय और ओ. आर. एस. के प्रावधानों को भी प्रस्तुत करेगा।

वी.

गुजरात राज्य और ए. एन. आर. [आर. एफ. नरीमन, जे.]

जिसके तहत किसी भी गवाह को अदालत द्वारा तलब किया जा सकता है और

व्यक्ति को किसी भी स्तर पर मुकदमे का सामना करने के लिए नोटिस जारी किया जा सकता है, एक तरह से अनावश्यक। स्वयंसिद्ध रूप से, इस प्रकार आगे की जांच के लिए विद्वान मजिस्ट्रेट के निर्देश को रद्द करने वाला विवादित निर्णय है

असाधारण और किसी भी हस्तक्षेप के योग्य नहीं है। यहां तक कि

अन्यथा तथ्यों पर, की प्रगति को ध्यान में रखते हुए

मुकदमे में विकास, और विशेष रूप से, पर देरी

आगे के लिए अनुरोध करने में सूचना देने वाले का हिस्सा

जांच, यह अन्यथा मनोरंजक नहीं था जैसा कि सही है

उच्च न्यायालय द्वारा आयोजित "। 37. इस फैसले का पालन हाल ही में एक खंड पीठ ने किया था।

अथुल राव बनाम में इस न्यायालय का नाम। कर्नाटक राज्य और अन्न। 3) 14 पैराग्राफ 8 पर एस. सी. सी. 298। विकास रंजन रूट बनाम। राज्य

सचिव (गृह), राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली सरकार

) 5 एस. सी. सी. 542, कई फैसलों का उल्लेख करने के बाद इस न्यायालय ने निम्नानुसार संकेत दियाः

" 7. उपरोक्त निर्णयों में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून पर विचार करते हुए और यहां तक कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2), 173,227 और 228 के प्रासंगिक प्रावधानों पर विचार करते हुए, जो सामने आ रहा है वह यह है कि जांच समाप्त होने के बाद और

पुलिस द्वारा धारा 173 (2) (i) दंड प्रक्रिया संहिता के तहत मजिस्ट्रेट को रिपोर्ट भेजी जाती है, तो विद्वान मजिस्ट्रेट या तो (1) रिपोर्ट स्वीकार कर सकता है और अपराध का संज्ञान ले सकता है और प्रक्रिया जारी कर सकता है, या

(2) रिपोर्ट से असहमत हो सकते हैं और कार्यवाही को छोड़ सकते हैं, या (3) धारा 156 (3) के तहत आगे की जांच का निर्देश दे सकते हैं और पुलिस से आगे की रिपोर्ट बनाने की आवश्यकता हो सकती है। यदि मजिस्ट्रेट असहमत हैं

रिपोर्ट के साथ और कार्यवाही को छोड़ देता है, सूचना देने वाला है विरोध प्रस्तुत करने का अवसर दिया जाना आवश्यक है

सूचना देने वाला, मजिस्ट्रेट आगे निर्णय ले सकता है कि आरोपी के खिलाफ कार्यवाही को बंद किया जाए या नहीं। अगर विद्वान मजिस्ट्रेट आपत्तियों को स्वीकार करता है, उस मामले में, वह प्रक्रिया जारी कर सकता है और/या आरोपी के खिलाफ आरोप भी बना सकता है। के रूप में

यहाँ ऊपर देखा गया, संतुष्ट नहीं होने के कारण

पुलिस द्वारा भेजी गई रिपोर्ट पर विचार करने पर जांच

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (2) (i) के तहत, मजिस्ट्रेट उस स्तर पर,

आगे की जांच का निर्देश दें और पुलिस से एक

आगे की रिपोर्ट। हालाँकि, यह ध्यान रखना आवश्यक है कि सभी [2019] 15 एस. सी. आर.

उपरोक्त को पूर्व-संज्ञान चरण में किया जाना आवश्यक है। एक बार जब विद्वान मजिस्ट्रेट संज्ञान लेता है और द्वारा भेजी गई रिपोर्ट के साथ प्रस्तुत की गई सामग्री पर विचार करता है।

इसके अलावा, मजिस्ट्रेट के लिए आगे की जांच के लिए जांच एजेंसी को निर्देश देना हमेशा खुला/अनुमेय था और यहां तक कि आरोप तय करने और/या उस स्तर पर रिपोर्ट पर कोई अंतिम निर्णय लेने को भी स्थगित कर दें। हालांकि, एक बार जब विद्वान मजिस्ट्रेट, रिपोर्ट और रिपोर्ट के साथ रखी गई सामग्री के आधार पर, आरोपी को आरोपमुक्त कर देता है, तो हमें डर है कि

इसके बाद मजिस्ट्रेट स्वतः संज्ञान लेते हुए जाँच एजेंसी द्वारा आगे की जाँच का आदेश दे सकता है। एक बार आरोपमुक्त करने का आदेश पारित हो जाने के बाद, मजिस्ट्रेट के पास आगे के लिए जांच अधिकारी को स्वतः निर्देश देने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है

जाँच करें और रिपोर्ट प्रस्तुत करें। ऐसी स्थिति में, केवल दो उपचार उपलब्ध हैं: ((i) आरोपमुक्त किए जाने के विरुद्ध पुनरीक्षण आवेदन दायर किया जा सकता है या (ii) न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के चरण तक प्रतीक्षा करनी होगी। हालांकि, साथ ही, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (8) के प्रावधानों पर विचार करते हुए, जांच एजेंसी के लिए आगे की जांच के लिए आवेदन दायर करना हमेशा खुला रहता है और

इसके बाद नई रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए और न्यायालय, विनुभाई हरिभाई मालवीय और ओआरएस पर।

वी.

गुजरात राज्य और ए. एन. आर. [आर. एफ. नरीमन, जे.]

जाँच एजेंसी द्वारा प्रस्तुत आवेदन, आगे की जाँच की अनुमति दें और जाँच अधिकारी को एक नई रिपोर्ट दाखिल करने की अनुमति दें और विद्वान द्वारा इस पर विचार किया जा सकता है।

मजिस्ट्रेट उसके बाद कानून के अनुसार। मजिस्ट्रेट स्वतः संज्ञान लेते हुए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (8) के तहत आगे की जांच या संज्ञान के बाद के स्तर पर किसी मामले में सीधे पुनः जांच का निर्देश नहीं दे सकता है, विशेष रूप से जब दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 227 के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए मजिस्ट्रेट आरोपी को आरोपमुक्त कर देता है। हालाँकि, धारा 173 (8) सी. आर. पी. सी. को शक्ति प्रदान करती है

धारा 173 सी. आर. पी. सी. की उप-धारा (2) के तहत रिपोर्ट अग्रेषित करने के बाद आगे की जांच करने और मौखिक या दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी। इसलिए, जांच अधिकारी के लिए उप-धारा के तहत रिपोर्ट भेजने के बाद भी आगे की जांच के लिए आवेदन करना हमेशा खुला रहता है।

अभियुक्त को आरोपमुक्त करने के बाद जाँच/पुनः जाँच। इस प्रकार निष्कर्ष निकालने में कठिनाई को महसूस करते हुए, न्यायालय ने आगे कहा

" 10. तथापि, विद्वान मजिस्ट्रेट द्वारा की गई टिप्पणियों और विद्वान मजिस्ट्रेट द्वारा इंगित जांच में कमी को ध्यान में रखते हुए और अंतिम लक्ष्य वास्तविक अपराधी के खिलाफ मामला दर्ज करना और/या दंडित करना है, जांच अधिकारी के लिए आगे की जांच के लिए विद्वान मजिस्ट्रेट के समक्ष एक उचित आवेदन प्रस्तुत करना और नए सिरे से जांच करना और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (8) के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए आगे की रिपोर्ट प्रस्तुत करना और उसके बाद विद्वान मजिस्ट्रेट उसी पर विचार करने के लिए स्वतंत्र होगा। कानून के अनुसार और अपने गुणों के अनुसार।

38. इन फैसलों में अदालत द्वारा कोई उचित कारण नहीं दिया गया है कि प्रक्रिया जारी होने पर और एक आरोपी के पेश होने पर मजिस्ट्रेट की आगे की जांच का आदेश देने की शक्तियां क्यों समाप्त हो जाएंगी।

मजिस्ट्रेट, जबकि संगत रूप से, अपराध की जांच करने की पुलिस की शक्ति मुकदमे की सुनवाई के चरण तक जारी रहती है। इस तरह का दृष्टिकोण पहले के निर्णयों [2019] 15 एस. सी. आर. के अनुरूप नहीं होगा।

इस न्यायालय के, विशेष रूप से, सकिरी (ऊपर), समाज परिवर्तन समुद्र (ऊपर), विनय त्यागी (ऊपर), और हार्डीप सिंह (ऊपर) ने स्पष्ट रूप से अभिनिर्धारित किया है कि आपराधिक मुकदमा संज्ञान लेने के बाद शुरू नहीं होता है, बल्कि आरोप तय होने के बाद ही शुरू होता है। इस न्यायालय के हाल के फैसलों में जिस बात को कोई महत्व नहीं दिया गया है, वह है संविधान का अनुच्छेद 21 और यह तथ्य कि अनुच्छेद एक निष्पक्ष और न्यायपूर्ण जांच से कम की मांग नहीं करता है। यह कहना कि एक निष्पक्ष और न्यायपूर्ण जांच से यह निष्कर्ष निकलता है कि पुलिस के पास आरोप तय होने तक अपराध की आगे की जांच करने के लिए धारा 173 (8) के तहत मजिस्ट्रेट की मंजूरी के अधीन शक्ति बनी रहती है, लेकिन यह कि पर्यवेक्षी

मजिस्ट्रेट की अधिकारिता अचानक मुकदमे से पहले की कार्यवाही के बीच में ही बंद हो जाती है, यह न्याय का उपहास होगा, क्योंकि कुछ मामले आगे की जांच के लिए पुकार कर सकते हैं ताकि किसी निर्दोष व्यक्ति को गलत तरीके से आरोपी के रूप में पेश न किया जाए या कि कोई प्रथम दृष्टया दोषी व्यक्ति इस तरह छूट न जाए। मजिस्ट्रेट की शक्तियों के बारे में इस तरह के संकीर्ण और प्रतिबंधात्मक दृष्टिकोण के लिए कोई वारंट नहीं है, विशेष रूप से जब ऐसी शक्तियां दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156 (1), धारा 2 (एच) और धारा 173 (8) के साथ पठित धारा 156 (3) के लिए पता लगाने योग्य हैं, जैसा कि ऊपर देखा गया है, और मुकदमा वास्तव में शुरू होने से पहले एक आपराधिक मामले की प्रगति के सभी चरणों में उपलब्ध होगा। यह न्याय के हित में भी होगा कि प्रत्येक मामले के तथ्यों के आधार पर स्वयं मजिस्ट्रेट द्वारा इस शक्ति का प्रयोग किया जाए। आगे की जाँच का आदेश दिया जाना चाहिए या नहीं, यह विद्वान मजिस्ट्रेट के विवेक के भीतर है जो प्रत्येक मामले के तथ्यों पर इस तरह के विवेक का प्रयोग करेगा।

39. अब हम कुछ अन्य निर्णयों पर आते हैं जो हमारे सामने उद्धृत किए गए थे। राजा सम्राट वी। ख्वाजा नजीर अहमद ए. आई. आर 1945 पी. सी. 18, श्री बसंत द्वारा इस प्रस्ताव के लिए दृढ़ता से भरोसा किया गया था कि वरिष्ठ न्यायालयों के विपरीत, मजिस्ट्रेटों के पास विनुभाई हरिभाई मालवीय और ओआरएस के तहत कोई अंतर्निहित शक्ति नहीं थी।

वी.

गुजरात राज्य और ए. एन. आर. [आर. एफ. नरीमन, जे.]

सीआरपीसी। चूँकि हमने मजिस्ट्रेट की शक्ति को आधार बनाया है

जब तक दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (8) के साथ पठित धारा 156 (3) के तहत आरोप तय नहीं किए जाते, तब तक इस मामले में दंड प्रक्रिया संहिता के तहत किसी भी अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग करने वाले मजिस्ट्रेट के बारे में कोई सवाल नहीं उठेगा।

40. भारत संघ और एएनआर। वी. डब्ल्यू. एन. चड्ढा (1993) सप. 4

एस. सी. सी. 260, एक निर्णय है जिसमें कहा गया है कि अभियुक्त को तब तक जांच में भाग लेने का कोई अधिकार नहीं है जब तक कि उसे प्रक्रिया जारी नहीं की जाती है, बशर्ते कि निष्पक्ष जांच की आवश्यकताओं का सख्ती से पालन हो। नागावा बनाम। वीरन्ना शिवालोंगप्पा कोंजलगी और अन्य। (1976) 3 एस. सी. सी. 736, प्रभा माथुर और अन्र। वी. प्रमोद अग्रवाल और अन्य। , (2008) 9 एस. सी. सी. 469, नरेंद्र जी. गोयल बनाम। की स्थिति

महाराष्ट्र (2009) 6 एस. सी. सी. 65 और दीनूभाई भोगभाई सोलंकी बनाम। गुजरात राज्य और अन्य। (2014) 4 एस. सी. सी. 626, जिसमें कहा गया है कि अभियुक्त को जाँच के चरण में सुने जाने का कोई अधिकार नहीं है, का हमारे सामने सटीक प्रश्न से बहुत कम लेना-देना है। इसलिए ये सभी निर्णय अलग-अलग हैं। इसके अलावा, बाबूभाई बनाम। गुजरात राज्य और अन्य। (2010) 12 एस. सी. सी. 254, एक निर्णय है जो आगे के बीच अंतर करता है।

जाँच और पुनः जाँच, और यह अभिनिर्धारित करता है कि एक उच्च न्यायालय, आपराधिक न्याय के गर्भपात को रोकने के लिए, यदि वह आवश्यक समझता है, तो नए सिरे से जाँच का निर्देश दे सकता है, जबकि एक मजिस्ट्रेट की शक्ति आगे की जाँच का आदेश देने तक सीमित है। चूँकि वर्तमान मामला पुनः जाँच से संबंधित नहीं है, इसलिए यह निर्णय भी हमें बहुत आगे नहीं ले जा सकता है। इसी तरह, रोमिला थापर बनाम। भारत संघ, (2018) 10 एस. सी. सी. 753 ने अभिनिर्धारित किया कि कोई अभियुक्त किसी जाँच एजेंसी को बदलने के लिए नहीं कह सकता है, या यह आवश्यक है कि जाँच एक विशेष तरीके से की जाए, जिसमें अदालत की निगरानी में जाँच की माँग करना भी शामिल है। यह निर्णय उस प्रश्न से भी बहुत दूर है जो इस मामले के तथ्यों में हमारे द्वारा तय किया गया है।

41. जब हम इस मामले के तथ्यों पर आते हैं, तो यह स्पष्ट होता है कि 22.12.2009 की प्राथमिकी दो आपराधिक कृत्यों से संबंधित है, अर्थात्,

विचाराधीन कृषि भूमि के संबंध में नकली और फर्जी 'सतखत' और पावर-ऑफ-अटॉर्नी तैयार करना और रुपये की राशि की मांग करना। 2.5 अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा धन उगाही के प्रयास के रूप में करोड़। आगे की जाँच के लिए आवेदन में जिन तथ्यों का आरोप लगाया गया है, वे ऐसे तथ्य हैं जो रमनभाई भागूभाई पटेल और शंकरभाई भागूभाई पटेल के पक्ष में की गई राजस्व प्रविष्टियों से संबंधित हैं और कैसे उसी भूमि पर उनका दावा झूठा और झूठा है। श्री बसंत, इसलिए, यह प्रस्तुत करने में सही हैं कि आगे [2019] 15 एस. सी. आर. के लिए आवेदनों में कथित तथ्य।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

जाँच वास्तव में एक क्रॉस-एफ़. आई. आर. की प्रकृति में होती है जिसे कभी दर्ज नहीं किया गया है। वास्तव में, के आयुक्त का संचार

राजस्व, गुजरात ने कलेक्टर, सूरत को दिनांकित 15.03.2011-जिस पर श्री दुष्यंत दवे ने इतनी दृढ़ता से भरोसा किया था-इस बात की पुष्टि करता है। इस संचार में, विद्वान आयुक्त को संदेह है कि एक राजस्व प्राधिकरण द्वारा पारित 14.04.1976 दिनांकित एक विशेष आदेश कभी मौजूद था, और यह कि

प्रपत्र संख्या 3 की प्रति प्राप्त करने के लिए 2010 में लंबे समय से मृत भीखाभाई खुशालभाई के नाम पर आवेदन, प्रथम दृष्टया, एक आपराधिक अपराध के बराबर होगा। इसके अलावा, विद्वान आयुक्त आगे कहते हैं

कि भिकीबेन (भीखाभाई की विधवा), जिनका दिसंबर 1999 में निधन हो गया था, संभवतः वर्ष 2000 में आवेदन नहीं कर सकती थीं; जो दर्शाता है कि उनके हस्ताक्षर भी प्रथम दृष्टया जाली हैं। इसके अलावा, उक्त रमनभाई और शंकरभाई पटेल वर्तमान में 48 और 53 वर्ष के हैं, और यदि कहा जा सकता है कि वे 1934 से उक्त कृषि भूमि के कब्जे में हैं, तो उन्हें उस समय के कब्जे में कहा जा सकता है जब वे अभी तक पैदा नहीं हुए थे। इसके अलावा, चूंकि ये दोनों सज्जन शुरू से ही विदेश में थे, इसलिए यह कहा जाता है कि वे संभवतः कृषि भूमि पर खेती करने वाले किसान नहीं हो सकते थे। इन और कई अन्य कारणों से, आयुक्त ने निष्कर्ष निकालाः

" इस प्रकार, उपरोक्त सभी विवरणों को देखते हुए,

महिला आवेदक द्वारा प्रस्तुत, झूठे फर्जी मामले/प्रस्ताव/आदेश पारित करके या जाली दस्तावेज बनाकर उसकी भूमि के संबंध में घोटाला किया गया है। उन सभी के खिलाफ आपराधिक कार्यवाही शुरू करने के लिए प्रस्तुत किया जाता है जो हैं
इस तरह के घोटाले में शामिल हैं और क्या इस मामले में कोई सार है या नहीं? अपने स्तर पर इस संबंध में गहन जांच की जाए। जब तक इस मामले में वास्तविक विवरण स्पष्ट नहीं हो रहे हैं, तब तक एन. ए. अनुमति को रोकना आवश्यक प्रतीत हो रहा है।

निर्माण गतिविधियाँ। इसलिए, आवश्यक बनाने के बाद

उस संबंध में कार्यवाही, की गई कार्यवाही के आधार पर विस्तृत रिपोर्ट तुरंत प्रस्तुत की जानी है की गई कार्यवाही की अधोहस्ताक्षरित और आवधिक जानकारी

इस मामले में अधोहस्ताक्षरकर्ता को भी दिया जाए।

42. 15.03.2011 के संचार में आरोपों को देखते हुए, हमारा विचार है कि यह ऐसा मामला नहीं है जिसमें आगे की आवश्यकता हो 22.12.2009 पर दर्ज की गई एफ़. आई. आर. में कथित तथ्यों की जाँच। फिर भी, उक्त विनुभाई हरिभाई मालवीय और ओआरएस में विद्वान आयुक्त द्वारा जो कहा गया है, उसे ध्यान में रखते हुए।

हमारा विचार है कि पुलिस को इन तथ्यों के आधार पर एक प्राथमिकी दर्ज करने का निर्देश दिया जाए, जिसकी जांच संबंधित पुलिस आयुक्त द्वारा नामित एक वरिष्ठ पुलिस अधिकारी द्वारा की जानी चाहिए।

43. इसलिए हम उच्च न्यायालय के विवादित फैसले को दरकिनार करते हैं क्योंकि इसमें कहा गया है कि संज्ञान के बाद मजिस्ट्रेट को खारिज कर दिया जाता है।

आगे की जाँच का आदेश देने की शक्ति। हालाँकि, यह देखते हुए कि तथ्यों ने कहा है आगे की जाँच के लिए आवेदन में दिनांक 22.12.2009 की एफ़. आई. आर. के अनुसार की गई जाँच पर कोई सीधा असर नहीं पड़ता है, हम विवादित उच्च न्यायालय के फैसले को बरकरार रखते हैं क्योंकि इसने दिनांक 10.01.2012 के दूसरे अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश के फैसले को दरकिनार कर दिया है जिसमें कहा गया था कि

आगे की जांच का आदेश दिया, और परिणामी आदेश सेटिंग भी

आई. ओ. मुंशी की दो अतिरिक्त अंतरिम रिपोर्टों को अलग रखें। जहाँ तक 2011 के आपराधिक पुनरीक्षण आवेदन का संबंध है, हमने उच्च न्यायालय के विवादित फैसले को दरकिनार कर दिया, जिसने मामले को पुनरीक्षण अदालत में भेज दिया। नतीजतन, रिमांड पर विद्वान अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश के दिनांक 23.04.2016 के फैसले को भी दरकिनार कर दिया जाता है, जिससे 2016 का विशेष आपराधिक आवेदन No.3085 निष्फल हो जाता है।

44. हालाँकि, राजस्व आयुक्त के दिनांक 15.03.2011 के संचार में कथित तथ्यों की गंभीर प्रकृति को देखते हुए, हम

निर्देश दें कि पुलिस इस फैसले की तारीख से एक सप्ताह की अवधि के भीतर इस पत्र के आधार पर प्राथमिकी दर्ज करे। इस एफ़. आई. आर. की जाँच संबंधित पुलिस आयुक्त द्वारा नामित एक वरिष्ठ पुलिस अधिकारी द्वारा की जानी है, जिसे उस तारीख से तीन महीने की अवधि के भीतर जाँच के अनुसार एक पुलिस रिपोर्ट प्रस्तुत करनी है जिस दिन ऐसे अधिकारी को ऐसी जाँच करने के लिए नियुक्त किया जाता है। यदि ऐसी पुलिस रिपोर्ट के परिणामस्वरूप प्रथम दृष्टया मामला बनता है, और यदि न्यायिक मजिस्ट्रेट ऐसे आरोप-पत्र का संज्ञान लेते हैं, तो आरोप तय किए जाएंगे और मुकदमा चलाया जाएगा। इस बीच, आई. डी. 2 दिनांकित एफ. आई. आर. में मुकदमा, जिस पर इस अदालत ने आई. डी. 1 दिनांकित आदेश द्वारा रोक लगा दी है, तब तक शुरू नहीं किया जाएगा जब तक कि इस फैसले के अनुसार पुलिस द्वारा दर्ज की जाने वाली एफ. आई. आर. में पुलिस रिपोर्ट प्रस्तुत नहीं की जाती है। विद्वान मजिस्ट्रेट तब निर्णय ले सकता है, यदि दर्ज की जाने वाली एफ. आई. आर. में पुलिस रिपोर्ट का संज्ञान लिया जाता है, कि क्या एक संयुक्त मुकदमा होना चाहिए, या क्या दोनों एफ. आई. आर. के अनुसार एक के बाद एक अलग-अलग मुकदमे आयोजित किए जाने चाहिए।

45. इन टिप्पणियों के साथ, इन अपीलों का निपटारा किया जाता है।

अंकित ज्ञान

अपी
लों का निपटारा किया गया।